UNIVERSAL
LIBRARY

OU_180657

UNIVERSAL
LIBRARY

टॉल्स्टॉय कृत

देवदूत

अनुवादक

श्री० ऋषभ चरण जैन

ज्ञान प्रकाशन
दिल्ली

सर्वाधिकार सुरक्षित

मूल्य:—दो रुपये २५/०

श्रीमति शांतिदेवी जैन ध० प० श्री ऋषभ चरण जैन, दरियागंज,
दिल्ली द्वारा प्रकाशित तथा सुरेश प्रिन्टिंग एजेन्सी द्वारा देशभूषण प्रेस

देवदूत

१

सीमन चमार के पास न घर था, न कोई जायदाद थी। वह अपनी बीवी और बच्चों के साथ एक झोंपड़ी में रहता और मेहनत-मज़दूरी द्वारा जीविकोपार्जन किया करता था। काम सस्ता था और खाना महँगा। इस तरह दिन-भर में जो कुछ कमाता, खाने में ही खर्च हो जाता था। उसके पास एक फटा हुआ भेड़ की खाल का कोट था। उसी को सपरिवार ओढ़ कर जाड़े में गुज़ारा कर लेता था। दो साल से उसकी इच्छा थी कि भेड़ की एक खाल कोट बनवाने के लिए ले ले। इसी विचार से जाड़ा आरम्भ होने से पहले ही उसने कुछ रुपये बचा लिए थे। एक तीन रुबल* का नोट उसकी स्त्री की पिटारी में पड़ा था और पांच रुबल तथा बीस कोपक ग्राहकों की ओर बाकी था।

एक दिन प्रातःकाल उसने भेड़ की खाल खरीदने के लिए देहात जाने की तैयारी कर दी। कमीज़ से ऊपर उसने अपनी बीवी की बुनी हुई फ़तुही पहन ली और उसके ऊपर

---

* रूसी सिक्का। सौ कोपक का एक रुबल होता है। एक कोपक प्राय एक पैसे के बराबर होता है।

अपना कोट। तीन रुबल का नोट जेब में रक्खा। अपने लिए एक छड़ी काटी और कुछ जलपान करके चल पड़ा।

'पाँच रुबल जो मेरे बाकी पड़े हैं, जमा कर लूँगा।'—उसने मन में सोचा—'और तीन रुबल मिलाकर एक अच्छी सी खाल ले लूँगा।'

देहात पहुँचकर वह एक ग्राहक के घर गया। परन्तु वह मौजूद न था। उसकी बीवी ने कहा—रुपये दूसरे महीने ज़रूर पहुँच जायेंगे। इस समय घर में एक पैसा भी नहीं है।

सीमन दूसरे किसान के घर गया, परन्तु वह शपथ खाने लगा कि एक पैसा भी पास में नहीं है। सीमन ने उधार ही एक खाल खरीद लेने का विचार किया, परन्तु खाल वाले को उस पर विश्वास न था। उसने कहा—पहले दाम निकालो; उसके बाद अपनी पसन्द मुताबिक खाल ले लो। हम लहने की दिक्कत को अच्छी तरह जानते हैं।

सीमन ने बीस कोपक एक दूसरे किसान से वसूल किए और तला लगाने के लिए एक जूता भी उसे एक आदमी ने दे दिया। रास्ते में बीस कोपक को उसने शराब पी डाली। और बिना खाल खरीदे ही घर की ओर लौट चला।

सवेरे आने के समय उसे सर्दी मालूम होती थी, परन्तु इस समय शराब पीने के कारण वह काफी गरम था। वह अपनी छड़ी से बरफ के ढेलों को तोड़ता और दूसरे हाथ से जूतों को घुमाता हुआ और मन-ही-मन विचार करता चला जा रहा था—'यद्यपि मेरे पास भेड़ की खाल नहीं है, परन्तु मेरा शरीर गरम है। बस, दो-तीन ही घूंट तो पिया था। परन्तु शरीर की सारी रगों में गर्मी दौड़ गई। अब मुझे

खाल की कोई आवश्यकता नहीं। चला जाऊँगा और किसी बात की चिन्ता न करूँगा। मुझे चिन्ता किस बात की है। मैं भेड़ की खाल बिना भी जीवित रह सकता हूँ। परन्तु बीवी नाराज होगी। वास्तव में यह बड़ी लज्जा की बात है कि कोई दिन भर काम करे और उसे मज़दूरी न दी जावे। परन्तु अब की अगर उसने पैसे नहीं दिए, तो उसकी पीठ की खाल उधेड़ दूंगा। कमबख्त जब देता है तो केवल बीस कोपक। अब इस बीस कोपक का क्या करूँ, सिवा शराब पी जाने के? बड़ी तंगी है। बस, जब जाते हैं, तब यही बहाना किया करता है। तो इसके लिए मैं क्या करूँ? तुम्हारे पास घर है, जानवर हैं, सब कुछ है। मेरे पास क्या धरा है? बस जो कमाता हूँ वही खाता हूँ। तुम तो किसान हो, अनाज पैदा करते हो और खाते हो और मुझे एक-एक दाना खरीदना पड़ता है। कुछ करूं या न करूं, सप्ताह में तीन रूबल रोटियों के लिए खर्च करना ही पड़ता है। घर पहुँचता हूँ तो रोटी नदारद। बस, निकालो डेढ़ रूबल तो काम चले। × × बस, जो तुम्हारे ज़िम्मे हो, उसे फौरन अदा कर दिया करो तो झगड़ा मिटे।'

इस तरह सोचता हुआ सीमन सड़क के मोड़ पर गिरजा घर के पास पहुँच गया था। गिरजा के अन्दर उसे कोई सफेद चीज़ दिखाई पड़ी। दिन का प्रकाश शेष हो रहा था, इसलिए सीमन जरा ग़ौर से देखने लगा—यहां पर कोई पत्थर तो नहीं था, कोई बैल तो नहीं खड़ा है? परन्तु इसका सिर तो आदमी जैसा मालूम होता है। परन्तु इतना सफेद? फिर आदमी यहां, इस समय क्या करने आएगा?

निकट आकर सीमन ने उसे अच्छी तरह देखा, वह आदमी था। परन्तु पता नहीं, जिन्दा था या मुर्दा। वह चुपचाप गिरजा की दीवार से सट कर बैठा था। सीमन डर गया। उसने सोचा—इसे किसी ने मार डाला है और इसके कपड़े लेकर चलता बना है। अगर मैंने इसे छुआ भी तो विपद में पड़ जाऊँगा।

सीमन आगे बढ़ गया, गिरजाघर उसकी आंखों से ओझल हो गया। उसने एक बार फिर पीछे फिरकर देखा तो मालूम हुआ, आदमी अब भी हिल रहा है। सीमन और भी डर गया। मालूम नहीं, यह कौन है और क्यों यहां आया है। इसके पास जाना विपद में फँसना है। अगर वह उछल कर मेरा गला पकड़ ले, तो मैं भाग भी न सकूंगा।

इस प्रकार काल्पनिक विपद से भयभीत होकर सीमन भाग खड़ा हुआ। परन्तु फिर उसकी–चेतनता ने उसे रोका। वह ठहर गया और सोचने लगा—सम्भव है, वह बेचारा किसी आफत में पड़ गया हो। उससे डरने की कौन-सी बात थी। क्या मैं कोई अमीर थोड़े हो हो गया हूँ कि कोई मुझे लूट लेगा।

सीमन लौटकर उस आदमी के पास आ गया।

२

★★★

वह एक नवयुवक था। सर्दी से अकड़ गया था और चुपचाप बैठा था। मानो इतना कमजोर हो गया था कि बोल भी नहीं सकता था। सीमन उसके पास चला गया और उसे ध्यानपूर्वक देखने लगा। उस आदमी ने भी सीमन को देखा।

उसकी एक ही दृष्टि सीमन को पिघला देने को यथेष्ट थी। सीमन ने जूते को जमीन पर रक्खा, पेटी खोल दी और कोट उतार डाला।

'इस समय बात करने का अवसर नहीं है'—सीमन ने कहा—'लो यह कोट पहन लो।' सीमन ने उसका हाथ थाम कर उसे खड़ा कर दिया। जब वह सीधा खड़ा हुआ तो सीमन ने देखा, उसका शरीर साफ़ और स्वस्थ है। उसके हाथ-पांव सुडौल और चेहरा सुन्दर है। सीमन ने उसके हाथ कोट की आस्तीनों में डाल दिए और उसे अपना कोट पहना दिया। ऊपर से पेटी बांध दी। अन्त में अपनी टोपी भी उसके सिर पर रख दी। परन्तु उसे कुछ सर्दी का अनुभव हुआ। उसने सोचा, मैं चंदुला हूँ और इसके सिर के बाल बड़े-बड़े हैं। इसलिए फिर उसने टोपी को अपने सिर पर रख लिया। उसने वह मरम्मती जूते उसे पहना दिये और कहने लगा—'बस, अब चलो-फिरो शरीर गरमा जाएगा। बाकी बात फिर तै होंगी। क्यों, क्या तुम चल सकते हो ?'

नवयुवक खड़ा हो गया और कृतज्ञतापूर्ण दृष्टि से सीमन को देखने लगा। परन्तु मुँह से कुछ न बोला।

'तुम बोलते क्यों नहीं ?' सीमन ने पूछा—'सर्दी में यहां ठहरना ठीक नहीं, हमें घर चलना चाहिए। बस, अब चलो, मेरी लकड़ी ले लो। अगर तुम कमजोर हो तो इसी के सहारे चले चलो।'

वह चलने लगा। सीमन ने पूछा—'तुम रहने वाले कहां के हो ?'

'मैं इस देहात का रहने वाला नहीं हूँ।'

'हाँ, इतना तो मैं समझ गया हूँ। मैं इस देहात के लोगों को कुछ-कुछ जानता हूँ। तुम इस गिरजाघर तक कैसे पहुँचे ?'

'मैं कह नहीं सकता।'

'किसी ने तुम्हारे साथ बुरा बर्ताव किया है ?'

'किसी आदमी ने नहीं, ईश्वर ने मुझे दण्ड दिया है ?'

'ईश्वर तो सब पर शासन करता है। फिर भी तुम्हें पेट के लिए भोजन और रहने के लिए घर की जरूरत होगी। तुम जाना कहाँ चाहते हो ?'

'मेरे लिये सब जगह बराबर हैं ?'

सीमन आश्चर्य में पड़ गया। वह चोर नहीं जान पड़ता था। उसकी बातें भद्रोचित थीं। फिर भी उसने अपना कोई हाल नहीं बताया। सीमन ने सोचा, क्या मालूम इस पर क्या पड़ी है। फिर उसने उस युवक से कहा—अच्छा तो मेरे साथ मेरे घर चलो और शरीर को थोड़ा और गरमा लो।

दोनों सीमन की झोंपड़ी की ओर चले। हवा सर्द और तेज़ थी। सीमन को कमीज के नीचे सर्दी मालूम हो रही थी क्योंकि अब उसका नशा उतर रहा था। वह नास लेता हुआ चला और अपनी बीवी की फतुही अच्छी तरह लपेटे रहा। साथ-ही-साथ वह सोचता जाता था, खाल के बारे में बीवी से क्या कहूँगा। गया तो था खाल खरीदने और वापस आ रहा हूँ इस शान से कि शरीर पर वस्त्र भी नहीं है। और तुर्रा तो यह कि एक और मेहमान साथ है। मटरूना खुश न होगी।

बीवी की याद आते ही सीमन दुःखी हो गया। परन्तु

फिर कर जब उसने साथी युवक को देखा, तो उसका दिल बढ़ गया ।

३

★★★

सीमन की स्त्री ने सारा सामान तैयार कर लिया था । उसने लकड़ी काट ली थी । पानी भर चुकी थी । बच्चों को खिला चुकी थी और सोच रही थी कि उसे रोटी कब पकानी चाहिये; आज ही या कल ? क्योंकि रोटी का सिर्फ एक ही टुकड़ा बचा था ।

अगर सीमन ने कुछ शहर में ही खा लिया है तो कुछ रोटी कल के लिए बच जायेगी । वह सोच रही थी, कल का काम इसी से चल जाएगा । रोटी को उठाकर उसने उसकी तोल का अन्दाज़ा लगाया और मन-ही-मन बोल उठी, बस, अब मैं आज कुछ न पकाऊँगी । आटा भी तो थोड़ा ही बच गया है । कोशिश करके इसी को रविवार तक चलाना होगा । मटरूना ने रोटी को उठाकर हिफाजत से रख दिया और पति की कमीज़ में पैवन्द लगाने लगी । वह सोचती जाती थी, किस तरह उसका पति जाड़े के कोट के लिये खाल खरीदता होगा । ईश्वर करे, उसे कोई धोखा न दे; क्योंकि वह बड़ा ही सीधा-सादा है । वह किसी को धोखा नहीं देता । परन्तु एक बच्चा भी उसे ठग लेता है । आठ रुबल में एक बढ़िया खाल मिल जाएगी । पिछले साल गरम कोट के बिना जाड़ा काटना कठिन हो गया था । मैं न तो नदी तक जा सकती थी और न बाहर निकल सकती थी । जब वह बाहर जाता था तो घर के सारे कपड़े अपने शरीर पर डाल लेता

था और हमारे ओढ़ने को कुछ नहीं बचता था। परन्तु अभी तक आए नहीं। उन्हें अब तक आ जाना चाहिए। कहीं तमाशा न देखने लगे हों।

इतने में दरवाजे पर पैरों की आहट सुनकर मटरूना ने सुई को कपड़े में लगा दिया और वह दरवाजे की ओर गई। अपने पति के साथ उसने एक अपरिचित युवक को भी देखा। उसके सिर पर टोपी न थी। यह मटरूना ने फौरन ताड़ लिया कि उसका पति पीकर आया है। जब उसने देखा कि उसके शरीर पर कोट भी नहीं है, वह खाली हाथ लौटा है और लज्जित भाव से खड़ा है, तो वह हताश-सी हो गई। वह सोचने लगी, रुपयों की इसने शराब पी डाली है, एक बेकार आदमी के साथ अपना समय नष्ट किया और उसे साथ भी लेता आया है।

मटरूना ने दोनों को झोंपड़ी के अन्दर चला आने दिया और खुद उनके पीछे-पीछे आई। उसने देखा, नवागन्तुक एक छरहरे बदन का आदमी था और उसके पति का कोट पहने हुए था। कोट के नीचे कोई दूसरा वस्त्र न था। सिर पर टोपी भी न थी। अन्दर पहुँच कर वह चुपचाप खड़ा हो गया। मटरूना ने सोचा—यह जरूर कोई बड़ा आदमी है, क्योंकि डर रहा है।

मटरूना पेशानी पर बल डालकर चूल्हे के पास खड़ी हो गई और गौर से देखने लगी कि देखें, ये लोग क्या करते हैं। सीमन टोपी उतार कर इतमीनान से बैठ गया और बोला—'मटरूना, खाना तैयार हो तो लाओ, हम लोग खा लें।' मटरूना ने कुछ उत्तर नहीं दिया। वह चुपचाप अपनी

जगह पर खड़ी रही। सीमन ने देखा कि उसकी स्त्री अप्रसन्न है और अपने क्रोध को रोक रही है। उसने अनजान बनकर अजनबी का हाथ पकड़ा और बोला—'बैठ जाओ दोस्त, हम लोगों को कुछ खा लेना चाहिए।' अजनबी बेंच पर बैठ गया।

'क्या तुमने हम लोगों के लिए कुछ पकाया नहीं है ! 'सीमन ने स्त्री से पूछा।

मटरूना का क्रोध उबल पड़ा—'बेशक, मैंने पकाया है, परन्तु तुम्हारे लिए नहीं। मुझे मालूम होता है कि तुम शराबखाने में अपनी बुद्धि छोड़ आए हो। तुम कोट के लिए खाल लाने गये थे और इस तरह वापस आए कि अपनी देह पर का कोट भी नहीं रहा। साथ ही एक नंगे बदमाश को भी लेते आए हो। मेरे यहां शराबियों के लिए खाना नहीं है।

'बस मटरूना, अकारण बकवास मत करो। तुमको पहले पूछना चाहिए था कि यह कौन आदमी × ×'

'तुम यह बताओ कि पैसे क्या हुए ?'

सीमन ने जेब में हाथ डाला और तीन रुबल का नोट निकाल कर उसकी तहों को खोलता हुआ बोला—'यह हैं, तुम्हारे पैसे। एक लहने वाले ने कुछ नहीं दिया, परन्तु शीघ्र ही देने का वायदा किया है।'

मटरूना और भी बिगड़ी, एक तो खाल नहीं लाया, दूसरे एक नंगे को न जाने कहां से लिवा लाया और उसे अपना कोट भी दे दिया। झपट कर उसने नोट को मेज पर से उठा लिया और उसे हिफाजत से रखती हुई बोली—

'तुम्हारे लिए मेरे पास खाने को नहीं है, संसार के पियक्कड़ों और नंगों को हम नहीं खिला सकते .'

'फिर वही बातें, मटरूना, जरा अपना मुँह बन्द करो। पहले सुन लो। एक आदमी क्या रहा है× ×'

'एक शराबी बेवकूफ से मैं बुद्धिमत्ता की बातें सुन चुकी। मैं तुम्हारे साथ ब्याह जो नहीं करना चाहती थी, वह ठीक था। पियक्कड़ कहीं के! मेरी माँ ने कपड़े दिए थे, उन्हें भी बेचकर पी गये। अब कोट खरीदने गए थे, तो उसे भी पी आए।'

सीमन ने उसे समझाने की चेष्टा की, कि उसने केवल बीस कोपक खर्च किए हैं। इसके बाद वह बताना चाहता था कि इस अजनबी से कैसे भेंट हुई। परन्तु मटरूना उसे बोलने ही नहीं देती थी। वह उत्तरोत्तर नाराज होती गई और लगी गड़े मुर्दे उखाड़ने।

मटरूना बोलती ही गई। यहां तक कि झपट कर उसने सीमन की फतुही की आस्तीन पकड़ ली और कहा—'लाओ मेरी फतुही दे दो। मेरे पास सिर्फ एक ही है।'

सीमन ने सदरी को खींचा। हाथ निकालने में एक आस्तीन उलट गई। मटरूना ने जल्दी से खींचा। ऐसा मालूम होता था कि फतुही फट गई। उसने फतुही को अपने सिर पर डाल लिया और दरवाजे की ओर चली। परन्तु फिर रुक गई। वह अपना क्रोध उतारना चाहती थी और साथ ही यह जानना भी कि यह अजनबी कौन है?

मटरूना रुक गई और कहने लगी—'अगर यह अच्छा आदमी होता, तो नंगा न होता। यह कौन है और कहाँ

मिला ?'

'यही तो मैं तुमसे कहने की कोशिश कर रहा हूँ।'—सीमन बोला—'जैसा ही मैं गिरजे के पास पहुँचा, इसे सर्दी से अकड़ा हुआ पाया। ईश्वर ने मुझे इसकी सहायता के लिए भेज दिया। नहीं तो यह सर्दी से अकड़ कर मर जाता। मैं और क्या कर सकता था, इसे उठाया, अपना कोट दिया और साथ लेता चला आया। तुम नाराज़ न हो, हम सबको एक दिन मरना है।'

मटरूना ने क्रोध को रोक कर एक बार फिर आगन्तुक की ओर देखा और चुप रही। सीमन कहने लगा—'मटरूना, क्या तुमको ईश्वर से प्रेम नहीं है ?' यह सुन कर मटरूना का दिल नरम हो गया। वह उस दरवाज़े से वापस लौटी और चूल्हे के पास पहुँचकर खाना निकालने लगी। उसने रोटी का टुकड़ा, कढ़ी और छुरी तथा कांटा लाकर रख दिए।

'अगर तुम खाना चाहते हो, तो खा सकते हो।'—उसने कहा।

सीमन ने अजनबी को अपनी तरफ खींचकर मेज के पास बैठाया और कहा—'अपनी जगह लो।'

सीमन ने रोटी के टुकड़े काटे और उसे चूरमे के रूप में परिणत कर दिया और फिर खाने लगा।

मटरूना कोने में बैठ गई और हाथ को सिर से लगाकर अजनबी को देखने लगी। उसे उसके ऊपर बड़ी दया आ रही थी। वह अपने को उस पर मुग्ध पाने लगी और अजनबी का चेहरा चमकने लगा।

उसकी भौंहें जुड़ी हुई थीं। उसने आंखें उठाईं और मट-

रूना को देखकर मुस्कराया। जब वे खा चुके तो मटरूना ने मेज साफ़ कर दिया और उसने पूछा—'तुम्हारा घर कहां है ?'

'मैं इधर का रहने वाला नहीं हूं।'

'फिर तुम सड़क पर कैसे पहुँचे।'

'मैं बताना नहीं चाहता।'

'क्या तुम्हें किसी ने लूट लिया ?'

'ईश्वर ने मुझे दण्ड दिया।'

'और तुम नंगे पड़े हुए थे ?'

'हां, मैं नंगा पड़ा था और सर्दी से ठिठुरा जाता था। सीमन ने मुझे अपना कोट दिया और यहां ले आया। तुमने मुझे खाना खिलाया, पानी पिलाया, मुझ पर दया की। ईश्वर तुमको इसका बदला देगा।'

मटरूना उठी और दरीचा पर से सीमन की पैवन्द लगी हुई कमीज उठा लाई और उसे अजनबी को दे दिया। एक पाजामा भी लाई। 'यह लो' उसने कहा—मैं देखती हूँ, तुम्हारे पास कमीज भी नहीं है। लो, इसको पहनो और जहां जी में आए, लेट जाओ। चाहे लट्ठे पर, चाहे चूल्हे पर।'

आगन्तुक ने कोट उतार कर कमीज पहन ली और लट्ठे पर सो गया। मटरूना ने दिया बुझा दिया और अपने पति के पास सो गई। उसने कोट का अपने ऊपर डाल लिया। परन्तु उसे नींद नहीं आई। आगन्तुक उसके दिमाग़ के बाहर नहीं होता था। उसने सोचा, यह रोटी का अन्तिम टुकड़ा तक खा गया है। अब कल के लिये कुछ नहीं रह गया। फिर उसे कमीज और पाजामे का खयाल आया। वह इससे

दुखी हुई। परन्तु फिर जब उसे खयाल आया कि आगन्तुक उसे देखकर किस तरह मुस्कराया तो उसे बड़ी प्रसन्नता हुई।

मटरूना देर तक जागती रही। उसे मालूम हुआ कि सीमन भी जाग रहा है। उसने कोट को उसकी तरफ फैला दिया।

'सीमन !'

'क्या है ?'

'तुम लोग रोटी खा गए। अब कल क्या होगा ? शायद पड़ोसिन मरथा से कुछ उधार मिल जाय।'

'अगर हमें जीवित रहना है तो कल खाने का कोई बन्दोबस्त करना ही होगा।'

मटरूना कुछ देर चुप रही, फिर कहने लगी–'वह अच्छा आदमी मालूम होता है। परन्तु हमें अपना हाल क्यों नहीं बताता।'

'कोई कारण होगा।'

'सीमन।'

'कहो।'

'हम सबको देते हैं, परन्तु कोई हमें कुछ क्यों नहीं देता ?'

सीमन इस प्रश्न का कोई उत्तर न दे सका। उसने कहा—'अब हम लोगों को सो जाना चाहिये।' उसने करवट बदल ली।

५

प्रातःकाल सीमन उठा । बच्चे अभी तक सो रहे थे । मटरूना पड़ोसिन से उधार रोटी मांगने चली गई । आगन्तुक अकेला कमीज और पाजामा पहने बैठा था । उसकी आंखें ऊपर को उठी हुई थीं । उसका चेहरा पहले दिन की अपेक्षा अधिक चमक रहा था । सीमन ने उससे कहा—'मित्र, पेट भरने को रोटी और शरीर ढकने के लिए कपड़े की जरूरत होती है । इसके लिये आदमी को कुछ काम करना पड़ता है । तुम क्या काम करोगे ?'

'मुझे कुछ नहीं आता ।'

सीमन को आश्चर्य हुआ । परन्तु उसने कहा—'जिन्हें सीखने का भाव होता है, वे सब काम सीख सकते हैं ?'

'लोग काम करते हैं, मैं भी काम करूंगा ।'

'तुम्हारा नाम क्या है ?'

'मिकाइल ।'

'अच्छा मिकाइल, अगर तुम अपना हाल नहीं बताना चाहते तो तुम्हारी इच्छा, परन्तु अपना पेट पालने के लिये तुम्हें कुछ काम करना पड़ेगा । अगर तुम हमारे कहने के अनुसार काम करो, तो हम तुम्हें खाना और कपड़ा देंगे ।'

'ईश्वर तुम्हें इसका बदला दे । मैं सीखूंगा, बताओ, क्या काम करूं ?'

सीमन ने सूता लिया और उसको बटने लगा । 'यह बिल्कुल सहज है, देखो ।'

मिकाइल ने उसे गौर से देखा और सूते को अंगूठे पर लेकर खुद भी बटने लगा। इसके बाद सीमन ने उसे सूते पर चर्बी लगाना सिखाया। यह भी उसने अच्छी तरह सीख लिया। उसे जो कुछ भी सीमन बताता था, वह तुरन्त सीख लेता था। तीन दिन के बाद वह जूते इस तरह सीने लगा जैसे बरसों का सीखा हुआ हो। वह बिना दम लिए काम करता था और बहुत थोड़ा खाता था। जब काम समाप्त हो जाता तो वह चुपचाप बैठ जाता और ऊपर को ताकता। वह गली में बहुत कम जाता। केवल जरूरत के वक्त बोलता। न कभी हँसी करता और न कभी हँसता। उसे किसी ने मुस्कराते कभी न देखा, सिवा पहली रात के जब मटरूना ने उसे खाना दिया था।

६

★★★

दिन और सप्ताह गुजरते गये। साल भी पूरा हो गया। मिकाइल बराबर सीमन के साथ काम करता था। उसकी ख्याति यहां तक बढ़ी कि लोगों ने कहना आरम्भ किया कि मिकाइल जैसे मजबूत और सुन्दर जूते कोई नहीं बना सकता चारों तरफ से जूतों के लिए लोग सीमन के पास आते। अब वह बड़े आनन्द से जीवन व्यतीत करने लगा।

जाड़ों में एक दिन जब सीमन और मिकाइल बैठे काम कर रहे थे, एक गाड़ी, जिसमें तीन घोड़े जुते हुए थे और घण्टियां लगी हुई थीं, झोंपड़ी के पास आई। उन्होंने खिड़की से झांक कर देखा, गाड़ी आकर दरवाजे पर खड़ी हो गई। एक नौकर जल्दी से कूद कर उतरा और गाड़ी का पटका

खोल दिया। गाड़ी में से एक अमीर आदमी बालों का कोट पहने हुए उतर पड़ा और सीमन की झोंपड़ी की ओर बढ़ा। मटरूना दौड़ कर आगे बढ़ी और फाटक के दोनों किवाड़ खोल दिये। अमीर झोंपड़ी में घुसने के लिये झुका और अन्दर आकर जब सीधा खड़ा हो गया तो उसका सिर झोंपड़ी के छप्पर तक पहुँच गया। मालूम होता था कि उसने कमरे के सब कोनों को भर दिया है।

सीमन उठा और अदब से सिर झुका कर आश्चर्य से उसकी ओर देखने लगा। उसने इससे पहले इस तरह का आदमी नहीं देखा था। सीमन खुद दुबला था, मिकाइल भी उसी की तरह दुबला-पतला और मटरूना तो खुद हड्डियों की ठठरी मात्र थी। परन्तु वह आदमी किसी दूसरी दुनियां का मालूम होता था। लाल चेहरा, मोटी देह, सांड़ जैसी गरदन, और खड़ा इस तरह से था, जैसे लोहे का ढला हो।

अमीर ने जोर से सांस खींची, और बालों का कोट उतारा, बेञ्च पर बैठ गया और पूछा—'इस दूकान का मालिक कौन है ?'

'हुजूर मैं हूँ।'—सीमन ने आगे बढ़ कर जवाब दिया। तब अमीर ने अपने छोकड़े को पुकारा—'अरे फ़िदका, चमड़ा ला।' नौकर गाड़ी के अन्दर से एक बस्ता लेकर आया। अमीर ने बस्ते को मेज पर रख दिया। 'इसे खोल।' लड़के ने उसे खोल दिया। फिर अमीर ने चमड़े की तरफ इशारा किया। 'मोची, इधर देख !'—उसने कहा—इस चमड़े को देखता है ?'

'हां, हुजूर !'

'खबर भी है, यह किस तरह का चमड़ा है ?'

सीमन ने चमड़े को हाथ से छूकर देखा। बोला–'अच्छा चमड़ा है।'

'खूब रही, गधे, तूने अपनी जिन्दगी में ऐसा चमड़ा देखा भी है, जर्मनी का बना हुआ है। बीस रुबल में आया है।'

सीमन डर गया—'ऐसा चमड़ा देखना मेरे नसीब में कहां बदा है ?'

'ठीक, अब तुम इसके जूते मेरे लिए बना सकते हो या नहीं ?'

'हां हुजूर, बना सकता हूँ।'

अमीर ने चीख़ कर कहा—'तुम बना सकते हो, क्यों ? अच्छा, याद रहे कि तुम यह किसके लिये बना रहे हो, यह चमड़ा किस तरह का है। तुम्हें जूता ऐसा बनाना होगा जिसकी एक साल तक न तो सिलाई खुले और न उसकी शक्ल ही बिगड़े। अगर तुम इसको बना सकते हो, तो लो और चमड़े को काट डालो, नहीं तो जबाब दो। मैं तुमको बता देना चाहता हूँ कि अगर एक साल के अन्दर जूतों की शक्ल बिगड़ गई तो तुमको जेल भिजवा दूँगा और अगर यह साल भर ठीक रहा तो दस रुबल इनाम दूंगा।'

सीमन डर गया। कुछ जवाब न दे सका। उसने मिकाइल की ओर देखा और उसे कुहनी से ठेलते हुए पूछा—'क्या मैं इस काम को ले लूं ?' मिकाइल ने सिर हिलाकर इशारा किया, ले लो। सीमन ने मिकाइल के कहने के अनुसार चमड़ा ले लिया और वायदा किया कि ऐसा जूता बना दूंगा

जो साल भर तक ठीक बना रहेगा। अमीर ने अपना बायां पैर आगे बढ़ाया। नौकर को आवाज दी कि जूते उतार ले।

'अब मेरा नाप ले लो।'—उसने कहा। सीमन ने एक १७ इंच लम्बा कागज लिया। इसे साफ किया और झुक गया। हाथ को रूमाल में अच्छी तरह रगड़ लिया था, ताकि अमीर के मोजे खराब न हों। फिर वह नापने लगा! उसने पहले एड़ी नापी। पंजों का घेर नापा। फिर पांव की मुटाई नापनी चाही, परन्तु कागज़ छोटा हो गया, क्योंकि पांव लकड़ी के कुन्दे जैसा मोटा था। इसलिये बाध्य होकर सीमन को दूसरा कागज जोड़ना पड़ा।

'ख्याल रहे, जूते तंग न हों।'

अब अमीर ने अंगूठे को मोजे में मोड़ लिया और झोंपड़ी वालों को देखने लगा। 'यह कौन है?' उसने पूछा।

'यह मेरा मिस्त्री है, यही आपके जूते बनाएगा।'

'ख्याल रक्खो'—अमीर ने मिकाइल से कहा—'याद रहे कि जूते एक साल तक खराब न हों।'

सीमन ने भी मिकाइल को ध्यान से देखा। उसकी दृष्टि अमीर पर नहीं, वरन् कोने पर जमी हुई थी। मानो वह वहां किसी को देख रहा था। मिकाइल उसी तरह देखता रहा। एकाएक उसका चेहरा चमकने लगा और वह मुस्कराया।

'बदमाश, तू हँस क्यों रहा है?'—अमीर ने गरजकर पूछा—'ख्याल रख कि जूते ठीक समय पर मिल जायें।'

'ठीक समय पर तैयार हो जाएँगे।' मिकाइल ने कहा।

'भूलना नहीं।' अमीर ने ताकीद की। इसके बाद

उसने जूता पहन लिया। कोट शरीर पर डाला और दरवाजे की ओर बढ़ा। इस समय वह झुकना भूल गया। उसका सिर चौखट से खट से टकरा गया। वह गालियां देने लगा। जब वह चला गया तो सीमन ने कहा—'इस आदमी को देखो, हथौड़े से भी यह नहीं मर सकता। अभागे ने चौखट निकाल डाली।'

इस पर मटरूना बोल उठी—'जिस तरह वह रहता है, जितना बलवान न हो, वही थोड़ा है। इस चट्टान से तो मौत भी दूर भागती होगी।'

७

★★★

सीमन ने मिकाइल से कहा—'हमने काम तो अपने ऊपर ले लिया है, परन्तु हमें ख्याल रखना चाहिए कि कहीं मुसीबत में न फंस जायें। चमड़ा दामी है और अमीर क्रोधी। हमें कोई गलती नहीं करनी चाहिए। आओ, तुम्हारी आंखें तेज और हाथ सुबुक हैं। यह नाप लो, चमड़े को काट डालो। मैं तले की सिलाई पूरी कर लूँगा।' मिकाइल ने उसके कहने के अनुसार किया। उसने चमड़े को मेज पर फैलाकर दोहरा किया। चाकू और कांटा लिया। नाप-जोख कर काटने लगा। मटरूना खड़ी होकर देखने लगी। और उसका काटना देखकर आश्चर्य में पड़ गई। उसने सैकड़ों जूते कटते देखे थे। उसने देखा कि यह लम्बा काटने की जगह गोल काट रहा है। वह कुछ कहना चाहती थी, परन्तु उसने सोचा, शायद वह न जानती हो कि अमीरों के जूते

कैसे बनते हैं। मेरे ख्याल में मिकाइल मुझसे बेहतर जानता है। मैं कुछ न बोलूंगी।

जब मिकाइल चमड़े को काट चुका, तो फौरन सीने लगा, परन्तु दोनों तरफ सीने के बदले एक ही तरफ सी रहा था, जिस तरह स्लीपर सिए जाते हैं। मटरूना फिर आश्चर्य में पड़ी, परन्तु वह कुछ न बोली। मिकाइल दोपहर तक सीता रहा। जब सीमन खाने के लिए उठा, तो देखा कि बूट सीने के बदले उसने नरम स्लीपट सी डाले हैं।

'अफसोस !' उसने मन में कहा—'मिकाइल साल भर से मेरे साथ है, उसने कभी कोई भूल न की, परन्तु आज यह कैसा मूर्ख बनकर बैठा है। अमीर ने दोहरे तले का ऊंचा जूता बनाने को कहा है और इसने इकहरे तले का नरम स्लीपर सी डाला। मैं अब उसको क्या जवाब दूंगा। चमड़ा तो इसने बर्बाद कर दिया। मैं ऐसा चमड़ा अब कहां से लाऊंगा !'

उसने मिकाइल से पूछा—'भाई, यह तुम क्या कर रहे हो ? तुमने मुझे तबाह कर डाला। जानते हो, अमीर ने ऊंचे जूते बनाने को कहा था, परन्तु तुमने क्या बना डाला।'

अभी वह इतना ही बिगड़ने पाया था कि कुण्डी हिलने की झनझन आवाज आई। बाहर कोई खटखटा रहा था। खिड़की से उसने सिर निकालकर देखा, एक आदमी घोड़े पर सवार होकर आया था और घोड़े को बांध रहा था। सीमन ने दरवाजा खोल दिया और अमीर का नौकर भीतर आया।

'नमस्कार !' उसने कहा ।

'नमस्कार !' सीमन ने उत्तर दिया—'आपकी क्या सेवा करूँ ?'

'मेरी मालकिन ने मुझे जूतों के बारे में भेजा है ।'

'क्या आज्ञा है ?'

'मेरे मालिक को अब इसकी जरूरत नहीं, वह मर गये ।'

'क्या यह सम्भव है ?'

'तुम्हारे यहां से जाने पर वे रास्ते में ही मर गये । घर पहुँचते ही नौकर उन्हें उतारने आए तो वे बोरे की तरह लुढ़क गये । वह मरा हुआ था और ऐसा अकड़ गया था कि गाड़ी से निकालना कठिन हो गया । मालकिन ने कहला भेजा है कि जूते वाले से कह दो कि जिन्होंने जूते बनने को दिए थे, उन्हें जूतों की जरूरत नहीं है । अब जल्द उनकी लाश के लिए नरम स्लीपर बना दे । जब तक यह बन न जाए, तब तक वहीं ठहर जाना और लेकर आना ।'

मिकाइल ने चमड़े की एक गड्डी बनाई । दोनों स्लीपरों को हाथ में लेकर साफ किया और लपेटकर नौकर को दे दिया । नौकर ने गड्डी और स्लीपर लिया और 'नमस्कार' कह कर चलता बना ।

८

* * *

मिकाइल को सीमन के साथ रहते छः साल बीत चुके थे । वह कहीं जाता न था । अनावश्यक रूप से बोलता न था । इन छः सालों में वह केवल दो बार मुस्कराया । सीमन

उससे बहुत प्रसन्न था। वह उसका परिचय कभी नहीं पूछता था। शायद उसे भय था कि मिकाइल कहीं चला न जाय।

एक दिन सब घर ही बैठे थे। मटरूना घर का काम कर रही थी। बच्चे खेल-कूद कर रहे थे। सीमन जूता सी रहा था। मिकाइल दूसरी खिड़की पर बैठा हुआ जूते में तले लगा रहा था। एक बच्चा दौड़कर मिकाइल के पास आया और उसके कन्धे पर झुक कर देखना आरम्भ किया।

'मिकाइल चचा देखो, एक औरत दो लड़कियों के साथ आ रही है। वह देखो, लड़की लंगड़ी मालूम होती है!'

यह सुनकर मिकाइल ने काम छोड़ दिया और खिड़की से गली की ओर देखने लगा। सीमन को आश्चर्य हुआ, क्योंकि मिकाइल कभी गली की ओर देखता न था, परन्तु इस समय वह किसी वस्तु को बड़े ध्यान से देख रहा था। वास्तव में एक स्त्री बहुत मूल्यवान वस्त्र पहने आ रही थी। उसकी लड़कियां ऊनी शाल ओढ़े हुई थीं। दोनों की सूरत एक सी थी, परन्तु एक लंगड़ी थी। वह दरवाज़े के पास आई और उसे खोलकर पहले लड़कियों को अन्दर किया, फिर स्वयं भी आई।

'नमस्कार!'

'नमस्कार! आइए, विराजिए श्रीमती जी!' सीमन ने कहा—'मैं आपकी क्या सेवा करूँ?'

स्त्री टेबुल के पास बैठ गई! लड़कियां भी भयभीत-सी उसके पास सटकर बैठ गईं।

'मैं इन लड़कियों के लिए जूते बनवाना चाहती हूँ।'

'हम बना देंगे। हमने छोटे जूते बहुत कम बनाए हैं, फिर भी बना देंगे। मेरा मिस्त्री मिकाइल हर तरह का काम जानता है।' सीमन मिकाइल की ओर मुड़ा और आश्चर्य से देखा कि मिकाइल काम छोड़कर लड़कियों की ओर बड़े ध्यान से देख रहा है। इसमें सन्देह नहीं कि लड़कियां सुन्दर थीं। परन्तु इस पर भी यह समझ न सका कि मिकाइल क्यों उन्हें इस तरह घूर रहा है। मानो वह उन्हें पहचानता है। सीमन परेशान था और स्त्री से बातें करता था। जब जूते का दाम आदि तै हो गया, तो स्त्री ने लंगड़ी लड़की को गोद में उठा लिया।

'दोनों नाप इसी बच्ची के ले लो।'

सीमन ने नाप ले लिया। इसके बाद पूछा—'इसके पैर में क्या हो गया है? कैसी सुन्दर लड़की है। क्या यह इसी तरह पैदा हुई थी?'

'नहीं, इसकी माता ने इसका पांव कुचल डाला है।'

इसी समय मटरूना भी आ गई और उन्हें देखकर आश्चर्य में पड़ गई। उसने पूछा—क्या आप इनकी माँ नहीं हैं?

'नहीं, मैं इनकी मां नहीं हूँ। और न यह मेरी कोई हैं? परन्तु मैंने इन्हें गोद ले लिया है?'

'ये आपकी लड़कियां नहीं हैं, फिर भी आपका इनसे इतना प्रेम है?'

'मैं इनसे प्रेम क्यों न करूँ? मैंने इन्हें अपना दूध

पिलाया है। मेरा एक बेटा था, परन्तु ईश्वर ने उसे अपने पास बुला लिया। मुझे उससे बड़ी मुहब्बत थी।'

'फिर ये किसके बच्चे हैं ?'

९

★★★

स्त्री कहने लगी—छः साल हुए, इनके माता-पिता एक सप्ताह के भीतर ही मर गये। ये बच्चियां अपने पिता के तीन दिन बाद पैदा हुईं। इसके बाद दूसरे ही दिन इनकी माँ भी मर गई। मैं और मेरे पति देहात में खेती-बाड़ी करते थे। हम इनके पड़ोसी थे। इनका बाप लकड़ी काटकर जीविकार्जन किया करता था। एक दिन अकस्मात् एक कटा हुआ पेड़ उस पर गिर पड़ा और वह दब कर मर गया। इसी शोक में इनकी मां मर गई। मरते वक्त उसने करवट ली थी, उसी वक्त बच्ची का पैर दब गया था।

इनकी मां के मरने पर पड़ोसियों ने कहा कि इन्हें अपने पास रक्खो, इनका कोई बन्दोबस्त कर दिया जाएगा। तब से मैं इनका पालन-पोषण करने लगी। मेरे बच्चा पहले ही पैदा हो चुका था। मुझे दूध खूब होता था। खाने-पीने की भी कोई कमी न थी। मैं तीनों को दूध पिलाने लगी। पहले इन बच्चियों को पिलाती, फिर अपने बच्चे को। बच्चियां तो जी गईं; परन्तु मेरा बच्चा दो साल के अन्दर ही चल बसा। फिर कोई बच्चा नहीं हुआ। परन्तु हम बराबर धनवान होते गए। मेरा पति एक गोलेदार की ओर से काम करता है। उसको काफी वेतन मिलता है। मेरा

कोई बच्चा नहीं है। ये ही मेरे बच्चे हैं। मुझे इनसे बड़ी मुहब्बत है।'

उसने लंगड़ी बच्ची को उठाकर प्यार किया। मटरूना ने एक ठण्डी सांस ली और कहा—'यह कहावत कितनी सही है कि तुम बिना मां-बाप के भी जिन्दा रह सकते हो, परन्तु बिना ईश्वर के कोई जिन्दा नहीं रह सकता।'

वे इसी तरह बातें कर रहे थे, कि एकाएक सारा कमरा चमक उठा। मानो बिजली चमक गई। सब ने मिकाइल की ओर देखा। वह दोनों हाथ घुटनों पर रखे मुस्कुरा रहा था और उसकी दृष्टि ऊपर की ओर थी।

१०

★★★

स्त्री की नज़र लड़कियों पर थी। मिकाइल काम छोड़ कर उठा। खाल खोल डाली। इसके बाद वह सीमन और उसकी स्त्री की ओर अदब से झुका और कहने लगा—मालिकों, विदा! ईश्वर ने मेरा अपराध क्षमा कर दिया है। मैं आप लोगों से क्षमा-प्रार्थना करता हूँ, शायद मुझसे कोई गलती हो गई हो।'

इस समय मिकाईल का चेहरा चमक रहा था। सीमन आगे बढ़ा और मिकाइल के सामने झुक गया। उसने कहा—'मुझे मालूम हो रहा है कि आप आदमी नहीं हैं। मैं न तो आपसे कुछ पूछ सकता हूँ और न आपको रोक सकता हूँ। मैं आपसे यही जानना चाहता हूँ कि एक बार आप मेरी स्त्री को देखकर मुस्कराये, दूसरी बार जूते वाले अमीर को देख

कर और तीसरी बार इन लड़कियों को देखकर आपका चेहरा चमक उठा। आप कृपा करके बतलाएँ कि क्यों आपका चेहरा इस तरह चमक रहा है ? और केवल तीन ही बार क्यों मुस्कराये ?'

मिकाइल ने जवाब दिया—'मेरा चेहरा इसलिए चमका कि ईश्वर ने मुझे दण्ड दिया था, उसे क्षमा कर दिया। तीन बार मुस्कराने का कारण यह है कि ईश्वर ने मुझे संसार के तीन रहस्यों की जानकारी के लिए भेजा था। उन्हें मैंने मालूम कर लिया। पहली बात मैंने मालूम की कि तुम्हारी स्त्री ने मुझ पर दया की और खाना खिलाया। इसी पर मुस्कराया, दूसरी बार उस मोटे आदमी को देखकर मुस्कराया और तीसरी बार रहस्य मालूम करके मुस्कराया।'

'अब कृपा करके बताइए ईश्वर ने आपको क्यों दण्ड दिया था ? और तीन रहस्य क्या हैं, जिन्हें आपने प्राप्त किया है ?'

मिकाइल बोला—'ईश्वर ने मुझे आज्ञा उल्लंघन करने के अपराध में दण्ड दिया था। मैं आसमान का देवदूत था। मैंने ईश्वर की आज्ञा न मानी। ईश्वर ने मुझे एक स्त्री के प्राण-हरण करने की आज्ञा दी थी। मैं उड़कर संसार में पहुँचा और एक बीमार स्त्री को देखा, जिसे दो यमज लड़कियां पैदा हुई थीं। बच्चियां धीरे-धीरे माता की बगल में हिल रही थीं, परन्तु वह उन्हें उठाकर अपनी छाती तक नहीं पहुँचा सकती थी। जब उसने मुझे देखा, तो समझ गई कि ईश्वर ने प्राण लेने के लिए मुझे भेजा है। वह रोई और कहने लगी—'हे देव-दूत, मेरा पति अभी मरा है। इन

अनाथ बच्चों की देख-रेख करने वाला कोई नहीं है। अभी मेरा प्राण-हरण मत करो। मुझे इन्हें दूध पिलाने दो। जब ये अपने पैरों पर खड़ी हो जाएँ, तो आकर मेरे प्राण ले लेना।' बच्चे बिना मां के जीवित नहीं रह सकते। मैंने उसकी प्रार्थना सुन ली। एक बच्ची को उठाकर उसकी छाती से लगा दिया और दूसरी को उसके हाथ में दे दिया। इसके बाद मैं उड़कर ईश्वर के पास पहुँचा। मैंने विनय की कि मैं उसकी जान न निकाल सका। उसका पति पेड़ से दब कर मर चुका है। उसने दो बच्चियां जनी हैं और वह गिड़-गिड़ा रही है, कि उसके प्राण न लो। वह कहती है कि मुझे इन्हें पैरों के बल खड़ी कर लेने दो।

ईश्वर ने कहा कि जा, उसके प्राण-हरण कर ला और तीन रहस्य मालूम कर। जाकर जान ले कि मनुष्य में क्या होता है, उसे क्या नहीं दिया गया है और किस वस्तु पर लोगों का जीवन निर्भर करता है। जब तू ये रहस्य समझ लेगा तो मैं तुझे फिर स्वर्ग में बुला लूंगा।

तब मैं नीचे चला आया। उस स्त्री का प्राण-हरण कर लिया। बच्चे छाती से नीचे लुढ़क गए। मुर्दा शरीर एक ओर लुढ़क गया और बच्ची को दबा दिया। इस तरह लड़की का एक पैर मुड़ गया। मैं ऊपर को उठा कि इसके प्राण को ईश्वर के पास पहुँचा दूं, परन्तु मेरी बांहें नीचे की ओर झुक गईं और मेरे पर गिर गए। उसका प्राण ईश्वर के पास अकेले ही उड़ गया। मैं सड़क के किनारे गिर पड़ा।'

११

* * *

अब सीमन को मालूम हो गया था कि उसका साथी, जिसे उसने खाना-कपड़ा दिया था, कौन है ? वह खुशी और भय से रो पड़ा । देव-दूत कहने लगा—'मैं मैदान में अकेला पड़ा था । मैं मनुष्य की आवश्यकताओं—भूख-प्यास आदि से अनभिज्ञ था, जब तक कि मैं स्वयं मनुष्य न बन गया । मैं समझ नहीं सका कि मैं क्या करूं । जिस खेत में मैं था, उसके पास ही एक मकान देखा । वह ईश्वर की प्रार्थना का स्थान था । मैं वहां पहुँचा । आशा थी कि शायद वहां रहने को जगह मिल जाए, पर वहां ताला बन्द था । मैं उस मकान के पीछे चला गया, ताकि कम-से-कम सर्द हवा से ही बच सकूं । सन्ध्या हो गई थी । भूख भी लगी थी । बड़ी तकलीफ हो रही थी । एकाएक मुझे आदमी के पैरों की आहट सुनाई पड़ी । वह हाथ में जूते लटकाए और कुछ बकता जाता था । पहली बार मुझे मनुष्य-जीवन प्राप्त हुआ था और सब से पहली बार मैंने आदमी का चेहरा देखा । उसका चेहरा मुझे बड़ा भयानक मालूम हो रहा था । मैंने मुँह फेर लिया और उसको बातें करते सुना कि किस तरह वह अपने शरीर को सर्दी से बचाए और किस तरह अपने बच्चों की परवरिश करे । मैंने सोचा, मैं सर्दी से मर रहा हूँ और यह आदमी अपने ही खाने-पीने की बात सोच रहा है । वह मुझे मदद नहीं दे सकता । जब उसने मुझे देखा, तो उसकी पेशानी पर बल पड़ गया और उसका चेहरा और भी भयकर प्रतीत होने लगा । वह मेरे पास से होकर चला गया । मैं हताश

हो गया, परन्तु फिर मैंने देखा कि वह लौट रहा है। मैंने उसकी ओर देखा, परन्तु मैं उसे दोबारा न पहचान सका। पहले उसके चेहरे पर मैंने मौत देखी थी, परन्तु अब की वह जीवित नजर आया। इसके बाद उसने मुझे कपड़ा दिया, घर ले आया। उसकी स्त्री आई, वह उससे भी अधिक भयानक थी। मौत की दुर्गन्ध उसके मुँह से निकल रही थी। मैं सांस तक नहीं ले सकता था। वह मुझे बाहर निकाल देना चाहती थी। उसके पति ने उससे ईश्वर का जिक्र किया। वह फौरन बदल गई। मैंने देखा, मृत्यु का भाव उसके चेहरे से तिरोहित हो चुका था। मुझे मालूम हो गया कि मनुष्य प्रेम का भूखा है। मैं पहली बार मुस्कुराया।

'मैं तुम्हारे साथ रहा। साल-भर के बाद एक आदमी आया। मैंने उसकी ओर देखा। उसके कन्धों के पीछे मेरा साथी मृत्यु का दूत खड़ा था। मेरे सिवा उसे और कोई नहीं देख सका। मैं जान गया कि यह फौरन मर जायगा और इसे फिकर लगी है कि जूते साल-भर तक खराब न हों। अब मुझे मालूम हो गया कि मनुष्य को क्या नहीं दिया गया है।'

'आदमी में बसता क्या है ? मनुष्य को अपनी आवश्यकताओं की जानकारी नहीं है। इसलिए मैं दूसरी बार मुस्कुराया। ईश्वर ने मुझे दूसरे रहस्य का भी ज्ञान करा दिया। परन्तु मैं यह नहीं जान सका था कि मानव-जीवन का आधार क्या है। छठे वर्ष लड़कियां आईं। उनकी मां ने उनकी सारी कथा सुनाई कि वे कैसे जीवित रहीं। मैं समझ गया कि मानव-जीवन सर्वथा ईश्वर की दया पर ही निर्भर है। ईश्वर ने मुझे तीसरा रहस्य भी बताया और मैं तीसरी बार हँसा।'

१२

★★★

'देव-दूत के शरीर से कपड़े गिर गये और एक अद्भुत ज्योति से उसका सारा शरीर आच्छादित हो गया। उसका कण्ठ-स्वर ऊँचा होता गया। उसने कहा—'मनुष्य का जीवन चिन्ता नहीं प्रेम है।'

'मां को यह नहीं बताया गया कि बच्चे कैसे जिन्दा रहेंगे। मनुष्य को यह नहीं बताया गया कि शाम हो जाने पर उसे जूतों की जरूरत होगी या उसकी लाश के लिये नरम स्लीपरों की।'

'मैं जब आदमी था, तो प्रेम से ही जीवित रहा, चिन्ता करने से नहीं।'

'बच्चे जीवित रहे, इसलिए नहीं कि उन्हें माताको चिन्ता थी, बल्कि इसलिए कि एक ग़ैर ने उनसे प्रेम किया।

'पहले मैं समझता था कि ईश्वर ने आदमी को जीवन दिया है, जीने के लिये। ईश्वर नहीं चाहता कि लोग अलग-अलग रहें, इसीलिये उन्हें यह नहीं बताया गया कि उन्हें किस वस्तु की आवश्यकता है। अब मुझे अच्छी तरह मालूम हो गया कि मानव-जीवन प्रेम पर ही निर्भर है। ईश्वर ही प्रेम है।'

इसके बाद देव-दूत ने ईश्वर की स्तुति की। सीमन, उसकी स्त्री और बच्चों ने उसे प्रणाम किया। उसके कन्धों पर दो पर उग आए और वह आकाश में उड़ गया।

जब सीमन प्रणाम करके उठा तो उसका झोंपड़ा पहले ही जैसा था। वहां उसके परिवार के सिवा और कोई न था।

—०—

रंगरूट

१

* * *

"अब यह तो आपकी मर्जी रही सरकार ! मगर बात यह है, कि दतला-परिवार में से कोई गया, तो अफसोस की बात होगी । बेचारे बहुत ही अच्छे आदमी हैं । अगर महल के नौकरों में से कोई नहीं जायगा, तो जरूर उन बेचारों में से किसी को जाना पड़ेगा !"

और उसने अपना दांया हाथ बांये पर टेक लिया, सिर को दांये कन्धे की तरफ झुका लिया, पतले ओंठ मुँह में खींच लिए, आंखें जरा घुमालीं, और मुँह से और कुछ नहीं कहा । इस भाव से ऐसा प्रकट होता था, कि वह बिना जवाब दिये मालिकिन के सब ऊल-जलूल फरमान धैर्यपूर्वक सुनता रहेगा ।

यह गुमाश्ता अपनी मालिकिन से कुछ कहने आया है, चेहरा उसका सफा-चट्ट है, और गुमाश्तों की खास काट का कोट इसके शरीर पर है । पतझड़ का मौसम है, और शाम का समय । फौज की भर्ती के विषय में बात चल रही है । मालिकिन की जमींदारी में से तीन आदमी भेजे जाते हैं । दो का प्रबन्ध तो हो गया, बचा तीसरा, उसी का झमेला है ।

इलाके के किसानों में दतला-परिवार ही ऐसा है, जिसमें से तीन युवक फौज में भेजे जाने लायक हैं। पर गुमाश्ता इनको बचाकर पोलीकुश को भेजना चाहता है।

पोलीकुश कौन है ? महल का एक नौकर, जो अपनी गन्दी आदतों के लिए बदनाम है। अकसर उसे शराब, घास या और कोई चीज-बस्त चुराते पकड़ा गया है। पर मालिकिन इतने पर भी उससे स्नेह करती है, उसके दुर्दशा-ग्रस्त बच्चों पर दया दिखाती हैं, और कभी-कभी बाइबिल के उद्धरण सुनाकर उसे सचाई और ईमानदारी का उपदेश भी देती है।

वह पोलीकुश को फौज पर जाने देना नहीं चाहती, न वह यह चाहती है, कि दतला-परिवार संकट में पड़े। और चाहे भी क्यों ? वह तो इस परिवार के किसी आदमी को जानती पहचानती तक नहीं। पर न चाहने से क्या होता है? यह बात तो स्पष्ट ही है, कि अगर पोलीकुश न गया, तो दतला-परिवार का कोई आदमी जायगा !

अतः वह सोचते हुए कहने लगी—"मैं तो यह भी नहीं चाहती कि बेचारे दतला-परिवार के लोग संकट में पड़ें !"

गुमाश्ता कहना चाहता था—"तो फिर तीन-सौ रुबल* खर्च कीजिये; दूसरा आदमी मिल सकता है।" पर कह न सका।

बस, जब कह न सका, तो उपरोक्त भाव बनाकर चौखट के सहारे खड़ा हो गया, और मुँह पर दीनता छिड़ककर

---

* रूसी सिक्का:—करीब डेढ़ रुपये के बराबर।

मालिकिन के हिलते ओठों को दीवार पर, तस्वीर के नीचे, नाचती हुई उनकी परछाई का निरीक्षण करने लगा। इसमें पूरा सन्देह है कि उनके शब्दों पर भी उसका ध्यान था या नहीं। यहां तक कि ईगर मिखालोविच (गुमाश्ता) को जम्हाई आने लगी। पर फौरन ही वह सम्हल गया, और मुँह पर हाथ रखकर इस जम्हाई को खांसी में बदल दिया। आखिर जब मालिकिन का धारा-प्रवाह वक्तव्य समाप्त होता नजर न आया, तो उस गरीब को डर हुआ, कहीं नींद न आ जाय। तब उसने क्या किया? कि पहले उस टांग पर बोझ दिये खड़ा था, अब इस पर दे दिया। किसी तरह किस्सा खत्म हो, इसलिए बोला—"आपकी जैसी आज्ञा हो, मैडम बात यह है, कि गांव की पंचायत आज ठीक मेरे दफ्तर के सामने जुड़ी है, इसलिए हमें जल्द कुछ निर्णय कर लेना चाहिए। ज़ार का हुक्म है, कि पहली अक्तूबर से पहले-पहले रंगरूट भर्ती करके शहर भेज दिये जायँ। किसान तो इसी बात पर जोर दे रहे हैं, कि दतला-परिवार के अतिरिक्त और कहीं से कोई गुञ्जाईश नहीं है। पंचायत को आपके स्वार्थ की चिन्ता क्या हो सकती है? दतला-परिवार का नाश भी हो जाय, तो उसको बला से! उन लोगों की मुफलिसी और तंगदस्ती से मैं वाकिफ हूँ। इतने दिन मुझे आपके यहां गुमाश्तागिरी करते हो गये, मैंने तो हमेशा ही उन बेचारों को दाने-दाने का मोहताज पाया। अभी पिछले साल से छोटा भतीजा जरा कुछ कमाने काबिल हुआ है, कि लोग उसका नाश करने पर उतारू हो गये। अगर यह लड़का चला गया तो आपका लगान भी शायद ही पट सके! आप जानती हैं,

मैं तो आपका सेवक हूं, और अपने से अधिक आपके हित का खयाल रखता हूं।……अब आपकी जैसी इच्छा हो……… अपनी ऐसी तैसी में जाय दतला-परिवार, मुझे भला क्या जरूरत पड़ी, उनकी वकालत करने की ! मेरे कौन से रिश्तेदार लगते हैं ! न उन्होंने मुझे कुछ शीरनी दी है !…… मुझे क्या गर्ज……?"

"ईगर, ऐसी बात क्यों कहते हो, मेरे मन में तो ऐसा खयाल भी नहीं गुजरा।" मालिकिन ने बात काट कर कहा, और उसी क्षण उसे सन्देह हो गया, कि जरूर दतला ने ईगर की मुट्ठी गम की है !

"जी, मैं तो इसलिए कहता था, कि इलाके भर में दतला जैसा किसान दूसरा नहीं है। बड़ा ही मेहनती और सच्चा खानदान है। बूढ़ा दतला तो तीस बरस से बे-नागा गिर्जे में जाता है। शराब तो कभी छूता तक नहीं, और मुँह से आज तक दुश्मन तक को भी अलिफ-से-बे नहीं कहा, और सब से बड़ी बात, जो मैं आपसे कहना चाहता हूं—यह है, कि बुड्ढे के लड़के सिर्फ दो ही हैं, तीसरा तो भतीजा है; जिसे वह धर्म के नाम पर अपने घर में आश्रय दिए हुए है। एक बात और है। बहुत से लोगों ने क्या चालाकी की है, कि अपने लड़कों के अलग घर बसा दिए हैं, और इस तरह वे मुसीबत से बच गये। यह गरीब भोला-भाला है, उसे कुछ छल-छिद्र आता नहीं। बस उनकी भलमनसी और धार्मिकता का यह नतीजा हुआ, कि……"

पिछला अंश मालिकिन के कानों में नहीं पड़ा। उसकी नजर तो गुमाश्ते के कोट के बटनों पर थी। ऊपर का बटन

मजबूती से सिला हुआ था, बीच का बटन उधड़कर गिरना ही चाहता था। पर, नजर चाहे कहीं थी, ईगर का भाव मालिकिन ने समझ लिया; बोली—"बड़े ताज्जुब की बात है, कि तुमने अभी तक मेरा मतलब नहीं समझा ! अरे भाई मैं यह कब चाहती हूं, कि दतला-परिवार का कोई आदमी जाय ? मगर बात यह है, तुम जानते हो, जो लोग मेरे आश्रय में आते हैं, और मेरे यहां नौकरी करते हैं, मैं उनकी भलाई का ध्यान रखना अपना धर्म समझती हूं, और उनकी विपत्ति में अपना सब कुछ न्यौछावर करने को तैयार रहती हूं।"

मैं नहीं जानता, कि गुमाश्ते के दिल में यह खयाल आया या नहीं, कि पोलीकुश की रक्षा करने के लिए सर्वस्व न्यौछावर करने की जरूरत नहीं, सिर्फ तीन-सौ रूबल काफी हैं ! पर, अगर आया भी होगा, तो मालिकिन से यह बात कहने का साहस उसे कभी नहीं हुआ होगा !

"बस, मुझे तो यही कहना है।" वह बोली—मैं किसी तरह भी पोलीकुश को नहीं दे सकती। देखो, वह जो घड़ी की चोरी का मामला था, उसमें उसने खुद ही आकर मुझ से माफी मांगी, अपना अपराध स्वीकार किया, घण्टों बैठा रोता रहा, और आइन्दा कोई शिकायत न देने की कसम खाई। वह दिन था, और आज है—सात महीने बीते—कभी तो उसने प्रमाद नहीं किया, कभी शराब से बेहोश नहीं हुआ, और हमेशा हर काम चुस्ती और लगन के साथ करता रहा। उस दिन उसकी औरत कहती थी, कि अब उसमें जमीन-आसमान का अन्तर हो गया है। बताओ, अब जब उसने

"पोलीकुश को भेज दो !" मालिकिन ने निश्चयात्मक दृष्टि से ईगर का मुँह देखते हुए कहा।

ईगर ने एक बार ओठ फैलाए, जैसे हँसना चाहता हो। पर तुरन्त सम्हलकर वहीं का वहीं रह गया, और ओठ न जरा इधर हटे, न उधर।

बोला—"जो हुक्म, सरकार !"

"बहुत अच्छा," और ईगर मिखालोविच दफ्तर की ओर चल दिया।

२

★★★

पोलिकी (विरक्त होकर लोग जिसे पोलीकुश कहा करते थे) बड़ा अभागा था। इज्जत उसकी कौड़ी बराबर न थी, गांव का रहने वाला नहीं था, और गुमाश्ता नौकर, दासी कोई उसे फूटी आंख न देख सकता था। परिवार में सात प्राणी थे, और घर ऐसा निकृष्ट कि जिसकी हद ! एक लम्बे सहन को सायबान से पाट दिया गया था, और लकड़ी की दीवारों से काटकर चार छोटी-छोटी कोठरियां बना दी गई थीं। कोने वाली कोठरी पोलिकी की थी। बाकी तीन में और लोग रहते थे। एक टूटी हुई चारपाई, तीन टांग की मेज, थोड़े से फटे-गूदड़े और कुछ मिट्टी के बर्तन—यही इस अभागे परिवार का सामान था। अक्टूबर के महीने से जब ठण्ड शुरू होती थी, तो इन लोगों की दुर्दशा और भी बढ़ जाती थी। कुल जमा में एक भेड़ की खाल थी, जिससे कि ओढ़ने का काम लिया जा सकता था। पर उसे कौन-कौन

ओढ़ता ? अब सर्दी दूर करने के लिए छोटे बच्चे तो इधर से उधर दौड़ लगाकर वक्त बिताते, और बड़े दिन-भर सख्त काम करते रहते। रात को चूल्हे में खूब आंच सिलगाकर सब के सब बिना कुछ ओढ़े-बिछाये ही पड़ रहते। इस तरह दिन बीतते थे ! ऐसी दशा में रहना हमें आपको भयानक भले ही लगे, मगर उन गरीबों को जरा महसूस तक न होता था। अकुलीना, पति और बच्चों के कपड़े धोती, सीती, सिलाई करती, कातती, बुनती और अन्य मजदूरी के काम करती। पति-पत्नी की, और बच्चों की आमदनी से किसी तरह गुजारा चलता था। मगर यहीं तक होता तो कुछ रोना न था। एक सबसे बड़ी तकलीफ और थी। पोलिकी बचपन में संयोगवश एक नामी चोर के फन्दे में पड़ गया। यह चोर एक दिन साइबेरिया में निर्वासित कर दिया गया। इस चोर की शागिर्दी में रहकर पोलिकी भी इधर-उधर 'हाथ साफ करने' का अभ्यस्त हो गया। यहां तक कि समझदार होने पर भी यह आदत छुट न सकी। मां-बाप थे नहीं, सीख कौन देता ? बस शराब भी पीने लगा, और चोरी का तो यह हाल, कि जहां बैठता, कोई न कोई चीज साफ उड़ जाती। चाहे वह चीज कैसी ही निरर्थक और तुच्छ हो, पोलिकी को को इससे गर्ज नहीं, उसे तो अपने हाथ की सफाई दिखाने से काम था।

पर, मस्ल मशहूर है, कि बारह बरस में कूड़ी के भाग भी जागते हैं। अस्तु, पोलिकी के सुधरने का भी मौका आया औरत उसे अच्छी मिल गई। उसने दिन-रात उसे समझाना शुरू किया। आदत तो उसकी न छुटी, पर मन में आगा-

अपना इतना सुधार कर डाला है, तो मैं उसे ऐसी कड़ी सजा देती अच्छी लगूंगी ? इसके अतिरिक्त मैं तो ऐसे आदमी को सिपाही बनाना पाप समझती हूं, जो पांच बच्चों का बाप हो और अकेले जिस पर सबके पालन का भार हो !……नहीं, ईगर, अब इस बारे में तुम कुछ कहो ही मत।"

कहकर मालिकिन ने ग्लास में सोडा उँडेला, और पीना शुरू कर दिया। उधर वह घूंट भर रही थी, इधर ईगर, बुत्त की तरह खड़ा, उसके गले की हड्डी का हिलना देख रहा था।

थोड़ी देर बाद बोला—"तो फिर दतला……का ही निश्चय रहा ?"

मालिकिन ने हाथ मलकर कहा—"क्या अच्छी बात है, समझते ही नहीं ? क्या मैं दतला के बुरे में हूं ? मुझे उससे कुछ बैर है ? भगवान् साक्षी हैं, मैं तो उसके लिए जो कुछ कर सकूं, करने को तैयार हूं। (मजे की बात यह कि तीन-सौ रूबल की बात उसके दिमाग में भी न आई !) बस, अब बताओ, मैं क्या करूं। मैं इस मामले में जानूं भी क्या ?—जान भी कैसे सकती हूं ?—मैं औरत-जात ! चलो खैर, अब तो तुम पर ही विश्वास रखकर मुझे सन्तुष्ट होना पड़ेगा…! बस, जो तुम ठीक समझो, करो…पर ऐसा करना, जिसमें सभी खुश रहें—मेरा तो यही कहना है ! और किया भी क्या जाय ? दतला से कह सकते हो कि मुसीबत सभी पर आती है !…हाँ देखो, पोलीकुश को न भेजना, वह किसी भी सूरत में नहीं जा सकता ! याद रक्खो, उसे भेजने का विचार करते ही मेरा दिल धड़कने लगता है। बेचारा……"

उसका धारा-प्रवाह वक्तव्य न जाने कब जाकर खत्म होता, कि सहसा एक दासी ने कमरे में प्रवेश किया।

"क्या है, दनियाशा ?"

"एक किसान ईगर मिखालोविच से यह पूछने आया है, कि पंचायत कब तक उनके इन्तजार में बैठी रहे।"

—कहते-कहते उसने क्रोध-पूर्ण नेत्रों से ईगर की तरफ ताका, और मन ही मन कहा—"दुष्ट कहीं का ! जान पड़ता है, मालिकिन को नाराज कर दिया है। अब देख लेना जो रात के दो बजे तक भी हम लोगों को नींद की झपकी नसीब हो जाय !"

मालिकिन ने कहा—"तो, जाओ ईगर, जाकर जो ठीक समझो, निपटारा कर दो !"

"बहुत अच्छा सरकार" दतला के सम्बन्ध में अब उसने एक शब्द भी न कहा—"मगर हां देखिये, उस फल वाले से रुपया लाने के लिए किसे भेजा जाय ?"

"पीटर अभी शहर से नहीं लौटा ?"

"जी नहीं।"

"निकोलस को भेज दो।"

"पिताजी तो नदी पर काम करने भेजे गये हैं," दनियाशा ने टोककर कहा।

"तो फिर सरकार, मैं ही जाऊँ कल ?" गुमाश्ता बोला।

"ना ईगर, तुम्हारी तो यहां जरूरत रहती है," मालिकिन ने सोच में पड़कर कहा—"कितना रुपया है ?"

"चार सौ बासठ रूबल !"

"पोलीकुश को भेज दो !" मालिकिन ने निश्चयात्मक दृष्टि से ईगर का मुंह देखते हुए कहा।

ईगर ने एक बार ओठ फैलाए, जैसे हंसना चाहता हो। पर तुरन्त सम्हलकर वहीं का वहीं रह गया, और ओठ न जरा इधर हटे, न उधर।

बोला—"जो हुक्म, सरकार !"

"बहुत अच्छा," और ईगर मिखालोविच दफ्तर की ओर चल दिया।

२

★★★

पोलिकी (विरक्त होकर लोग जिसे पोलीकुश कहा करते थे) बड़ा अभागा था। इज्जत उसकी कौड़ी बराबर न थी, गांव का रहने वाला नहीं था, और गुमाश्ता नौकर, दासी कोई उसे फूटी आंख न देख सकता था। परिवार में सात प्राणी थे, और घर ऐसा निकृष्ट कि जिसकी हद ! एक लम्बे सहन को सायबान से पाट दिया गया था, और लकड़ी की दीवारों से काटकर चार छोटी-छोटी कोठरियां बना दी गई थीं। कोने वाली कोठरी पोलिकी की थी। बाकी तीन में और लोग रहते थे। एक टूटी हुई चारपाई, तीन टांग की मेज, थोड़े से फटे-गूदड़े और कुछ मिट्टी के बर्तन—यही इस अभागे परिवार का सामान था। अक्टूबर के महीने से जब ठण्ड शुरू होती थी, तो इन लोगों की दुर्दशा और भी बढ़ जाती थी। कुल जमा में एक भेड़ की खाल थी, जिससे कि ओढ़ने का काम लिया जा सकता था। पर उसे कौन-कौन

ओढ़ता ? अब सर्दी दूर करने के लिए छोटे बच्चे तो इधर से उधर दौड़ लगाकर वक्त बिताते, और बड़े दिन-भर सख्त काम करते रहते। रात को चूल्हे में खूब आंच सिलगाकर सब के सब बिना कुछ ओढ़े-बिछाये ही पड़ रहते। इस तरह दिन बीतते थे ! ऐसी दशा में रहना हमें आपको भयानक भले ही लगे, मगर उन गरीबों को जरा महसूस तक न होता था। अकुलीना, पति और बच्चों के कपड़े धोती, सीती, सिलाई करती, कातती, बुनती और अन्य मजदूरी के काम करती। पति-पत्नी की, और बच्चों की आमदनी से किसी तरह गुजारा चलता था। अगर यहीं तक होता तो कुछ रोना न था। एक सबसे बड़ी तकलीफ और थी। पोलिकी बचपन में संयोगवश एक नामी चोर के फन्दे में पड़ गया। यह चोर एक दिन साइबेरिया में निर्वासित कर दिया गया। इस चोर की शागिर्दी में रहकर पोलिकी भी इधर-उधर 'हाथ साफ करने' का अभ्यस्त हो गया। यहां तक कि समझदार होने पर भी यह आदत छुट न सकी। मां-बाप थे नहीं, सीख कौन देता ? बस शराब भी पीने लगा, और चोरी का तो यह हाल, कि जहां बैठता, कोई न कोई चीज साफ उड़ जाती। चाहे वह चीज कैसी ही निरर्थक और तुच्छ हो, पोलिकी को को इससे गर्ज नहीं, उसे तो अपने हाथ की सफाई दिखाने से काम था।

पर, मस्ल मशहूर है, कि बारह बरस में कूड़ी के भाग भी जानते हैं। अस्तु, पोलिकी के सुधरने का भी मौका आया। औरत उसे अच्छी मिल गई। उसने दिन-रात उसे समझाना शुरू किया। आदत तो उसकी न छुटी, पर मन में जाग-

पीछा जरूर होने लगा। उधर एक बार वह चोरी करते पकड़ा गया। पहले तो उसे लानत-मलामत दी गई, एकाध चांटा भी रसीद किया गया। फिर मामला पहुँचा मालिकिन के पास। अब उस पर नजर रक्खी जाने लगी। दूसरी बार फिर पकड़ा गया, तीसरी बार फिर। लोगों ने उससे नफरत करनी शुरू करदी, गुमाश्ते ने रंगरूटों में भेज देने की धमकी दी, मालिकिन ने डांट-डपट की और उसकी औरत हिड़की भर-भर कर रोई। सब तरफ से ले-दे, ले-दे मच गई। वैसे आदमी बुरा नहीं था, पर कमजोर तबियत का था, और आदत से लाचार था। हालत यह थी, कि कभी शराब से बेहोश होकर घर आता, और उसकी स्त्री उसे गालियां देती या कभी धौल-धप कर बैठती, तो वह रोकर कहता–"हाय! मैं बड़ा अभागा हूं, मैं मरता भी तो नहीं! मेरी आँखें फोड़ दे, जिससे फिर मैं ऐसा काम न करूँ!" तब मुश्किल से एक महीना राजी-खुशी बीता, और एक दिन हजरत फिर हो गये गायब! दो दिन बाद शकल दिखाई, तो वही शराब से पागल बनकर। पड़ौसियों ने कहा—"अभागे को फिर कहीं से मिल गया पैसा!" सब से पिछली दुर्घटना घड़ी के बारे में थी। बहुत दिनों से एक टूटी हुई दीवार-घड़ी दफ्तर में लटक रही थी, संयोगवश पोलिकी की नजर उस पर पड़ गई। फिर क्या कहना था? उसी दम उड़ गई। दुर्भाग्य की बात! जिस दूकानदार को घड़ी बेची, वह महल के एक नौकर का रिश्तेदार था। एक दिन जब वह मिलने आया, तो घड़ी की सारी बात खुल गई। खबर यथा समय मालिकिन के पास पहुँची, और पोलिकी को उनके सामने पेश

किया गया। वह जाते ही उनके पैरों पर गिर पड़ा, और कातर स्वर में सब कुछ कबूल लिया। उसकी स्त्री ने जिस तरह कहा था, ठीक उसी तरह उसने मालिकिन से माफी मांगी। मालिकिन शुरू से ही उस पर, या कहें, उसके औरत बच्चों पर अनुग्रह रखती आई थीं। अतएव इस बार भी पोलिकी को माफी मिल गई, और मालिकिन ने घण्टों उसे पास बैठाकर दया, धर्म, सच्चाई और सादगी के विषय में उपदेश दिया। यह उपदेश मानों उसके दिल में उतर गया, और पोलिकी जार-जार रोने लगा। मालिकिन बोलीं—"मैं तुम्हें क्षमा कर सकती हूं, पर एक शर्त्त पर, कि भविष्य में कभी किसी तरह की शिकायत का मौका न मिले!"

"कभी नहीं मां, कभी नहीं!" पोलिकी ने रोते-रोते कहा—"असल मां-बाप का बेटा हूं, तो कभी ऐसा मौका न दूंगा!"

उठकर वह घर चला गया, दो दिन तक कुछ न खाया-पिया, और इसके बाद उसका जीवन ही बदल गया।

तोभी उसका जीवन सुखमय न था हरेक आदमी उसे चोर कहता और उससे घृणा करता था, और सारे नौकर-चाकर उसे रंगरूट बनाकर भेज देने के पक्ष में थे।

३

★★★

उस दिन शाम को जब दफ्तर के सामने बैठी, ग्राम-पंचायत रंगरूटों की भर्ती का निर्णय कर रही थी, पोलिकी अपने बिछौने के कोने पर बैठा हुआ था। बच्चे सब अण्टा-

गाफिल हो चुके थे। दो अंगीठी के सामने सुकड़े पड़े थे, दो बिछौनों में दबक रहे थे, और एक उस चटाई के पीछे झपकी ले रहा था, जिस पर बैठी हुई अकुलीना सूत कात रही थी। आले पर मोमबत्ती धरी जल रही थी।

पोलिकी ने पतलून की जेब से लकड़ी की चिलम निकाली और हुक्के पर जमाने लगा। अकुलीना उठकर गई, और तम्बाकू लाकर चिलम भरी। पोलिकी ने आँखें मींचकर धुआं खींचा, और मजे ले-लेकर हुक्का पीने लगा।

सहसा दरवाजा खुला, और महल की एक दासी ने भीतर प्रवेश किया। इसका नाम अक्षतका था, और वह इधर-उधर की दौड़-धूप के लिए नौकर रखी गई थी। बड़ी फुर्तीली लड़की थी! चलती थी तो जान पड़ता था—मानों गोली छुटी जा रही है। दोनों हाथ घड़ी के पेण्डुलम की तरह आगे की तरफ इधर-उधर घूमा करते थे, और शरीर में कहीं जरा सा मुड़ाव नजर न आता था। गाल उसके सदा लाल-सुर्ख रहते थे, और ज़बान उसकी इस तेजी से चलती थी, कि बस! अस्तु कमरे में घुसते ही उसने झट अंगीठी उठाली, और उसे लिये-लिये कमरे में इधर से उधर चक्कर लगाये। तब उसने हांफते-हांफते, रुक-रुककर अकुलीना से कहना शुरू किया—"मालिकिन ने······हुक्म दिया है······कि पोलिकी इसी दम उनके सामने हाजिर हो······कहा है······कि जरा भी देर न लगे······"

क्षण-भर ठहर कर उसने सांस लिया।

"ईगर मिखालोविच······बहुत देर से······मालिकिन से बातें कर रहा था······रंगरूटों की भर्ती के······सम्बन्ध

में...... बातचीत कर रहा था। .....पोलिकी का नाम...... भी लिया गया था। मालिकिन ने आज्ञा दी है, कि पोलिकी इसी दम .....उनके सामने हाजिर हो।"

अपनी बात समाप्त करके अक्षतका ने आधी मिनट के भीतर-भीतर पोलिकी, अकुलीना और बच्चों पर नजर डाल ली, और चिल्लाकर कहा—"इसी दम हाजिर हो......इसी दम !" और तब पेण्डुलम की तरह आगे-आगे हाथ हिलाती हुई झट-से चल दी।

अकुलीना फिर उठी, फटे हुए छेददार बूट लाकर स्वामी के आगे रखे, खूँटी पर से कोट उतारा और स्वामी के चेहरे पर दृष्टि-पात किये बिना ही उसकी तरफ बढ़ा दिया। पूछा—"कमीज तो नहीं बदलोगे ?"

"नहीं।" उसने जवाब दिया।

पोलिकी ने बूट चढ़ाये, कोट पहना। पर अकुलीना ने एक बार भी उसकी तरफ न देखा। न देखा तो अच्छा ही किया, क्योंकि पोलिकी का चेहरा ज़र्द पड़ गया था, दाँत कटकटाने लगे थे, और उसके निर्बल नेत्रों में वह भयानक, दयनीय और दीनता-पूर्ण भाव था, जो अक्सर दुर्बल-हृदय अपराधियों में नजर पड़ता है। उसने बालों में कंघी की, और बाहर चला। पर उसकी पत्नी ने उसे रोक लिया। कोट के भीतर से कमीज के कपड़े का एक रंगीन सूत लटक रहा था, और सिर पर टोपी भद्दे ढंग से रक्खी हुई थी। अकुलीना ने सूत को कोट के नीचे छिपा दिया, और टोपी ठीक से रख दी।

सहसा पड़ौस में रहने वाली बढ़ई की औरत ने पूछा—

"क्या बात है पोलिकी—क्या तुम्हें मालिकिन ने बुलाया है ?"

बढ़ई की औरत बड़ी जबान्दराज़ और लड़ाकी औरत थी। उसी दिन सुबह अकुलीना से झगड़ा कर के चुकी थी। अब पोलिकी के जाने की बात सुनकर उसे एक मतलब की बात याद आ गई। बोली—"मालूम होता है, मालिकिन तुम्हें चीजें खरीदने के लिए शहर भेजेंगी। देखना, जरा-सा काम मेरा भी है; आध सेर चाय लेते आना !"

अकुलीना की आंखों में क्रोध से आंसू आने को हो गये। पर उसने ज़ब्त किया, और ओठ भींचकर मुँह की बात मुँह में ही रक्खी। दुनियां के स्वार्थ पर उसे बड़ी घृणा हुई। उसका स्वामी तो फौज में जा रहा है, वह करीब-करीब विधवा होने वाली है, उसके निर्दोष बच्चों के भूखे मरने की तैयारी है, और पड़ोसिन को अपनी चाय की ही फिक्र है ! उसने खिन्न होकर मुँह बिछौने में छिपा लिया।

"अरी अम्मां ! तूने तो भींच दिया हमें !" खर्राटे भरती हुई छोटी बच्ची ने चिचियाकर कहा।

अकुलीना एक बारगी कष्ट-विह्वल होकर बोली—"तुम मर क्यों नहीं जातीं—सब की सब ! हाय ! मैंने तुम्हें इस दुनियां में सिर्फ कष्ट भोगने के लिये ही पैदा किया है !"

—कहती-कहती वह जोर से रो पड़ी। बढ़ई की औरत के ओठों पर हँसी की रेखा खिंच गई। सुबह की गालियां उसे भूली नहीं थीं !

४

★★★

आध घन्टा बीत गया। बच्चे ने रोना शुरू कर दिया। अकुलीना ने उसे उठाया, और दूध पिलाने लगी। अब उसकी आंखों में आंसू न थे। दुबला-पतला खूबसूरत चेहरा हथेली पर टेके, वह टिमटिमाती हुई मोमबत्ती की ओर स्थिर नेत्रों से ताक रही थी, और सोच रही थी कि क्यों उसने ब्याह किया ?—क्यों फौज में इतने सिपाहियों की जरूरत पड़ती है ?—इत्यादि।

सहसा स्वामी का पद-शब्द सुन पड़ा। आंखें पोंछकर उठ खड़ी हुई। पोलिकी किसी बहादुर सिपाही की तरह सीना ताने हुए कमरे में घुसा, टोपी लापरवाही से बिस्तर पर फेंक दी, और जोर-जोर से सांस लेता हुआ कमर की पेटी खोलने लगा।

"क्यों, किस लिए बुलाया था ?"

"हूं - बेशक ! पोलीकुश सबसे बुरा आदमी है !...... मगर जब काम ही करना हुआ, तो अच्छा बुरा......"

"क्या काम—कैसा काम ?"

पोलिकी ने जवाब देने में जल्दी न की। खूब जोर से थूका, और जेब से पाइप निकालकर दो-एक कश खींचे। तब बड़े इत्मीनान से बोला—"शहर से थोड़े रुपये लाने हैं।"

"रुपये लाने हैं ?" अकुलीना ने पूछा।

पोलिकी खांसा और सिर हिलाकर बोला—"वाह ! बड़ी ही भली-मानस है ! बोली—'लोग तुम्हें बुरा-बुरा

कहते हैं; लेकिन मैं सबसे ज्यादा तुम्हारा विश्वास करती हूँ। तुमने मुझसे वादा किया था, कि तुम अपना सुधार करोगे। लो, तुम्हारी परीक्षा का अवसर आ पहुँचा। तुम शहर के फल बेचने वाले के पास जाओ, और जो रुपया हमारा उसकी तरफ निकलता है, वह सब का सब ले आओ।' मैंने भी क्या बढ़िया जवाब दिया है—सरकार, हम तो आपके गुलाम हैं; जो हुक्म दोगी, सर-आंखों से बजा लायेंगे।" कहते-कहते वह अजीब तरह से मुस्कुराया। और कहने लगा—"फिर वह बोली, 'ईमान्दारी और होशियारी से काम करोगे न? याद रखना, उसी पर तुम्हारी तकदीर का फैसला है, मैंने कहा—'भला ईमान्दारी से क्यों नहीं करूँगा? अगर लोगों ने तरह-तरह की बातें बककर मुझे बदनाम किया है, तो किया करें—उनके कहने से मैं कोई बदनाम थोड़ा ही हो जाऊँगा? मैंने तो जबसे आपके सामने तौबा की है, फिर उस तरह का विचार भी मेरे दिमाग में नहीं आया।' मतलब यह कि मेरी सच्ची बातों का अभीष्ट असर मालिकिन पर हुआ और उन्होंने बड़े स्नेह-पूर्वक मुझे विदा किया।"

"तो क्या रुपया ज्यादा है?"

"चार सौ बासठ रूबल!" पोलिकी ने ला-परवाही से जवाब दिया।

अकुलीना ने सिर हिलाया और कहा—"कब जाओगे?"

"कल। मालिकिन ने कहा है—'अस्तबल में से चाहे जिस घोड़े को छांटकर ले जाना।' बस, कल सुबह ही चल दूँगा।"

"धन्य भगवान् !" अकुलीना ने सिर उठाकर कहा—"भगवान् हम पर बड़े दयालु हैं । वे आगे भी तुम पर कृपा करेंगे ।" तब उसने फुसफुसाकर कहना शुरू किया—"पोलिकी, मेरी बात सुनो । मैं तुम्हें भगवान् ईसा की सौगन्ध दिलाती हूँ, कि रास्ते में शराब की बूँद को हाथ न लगाना ।"

"अजी वाह !" पोलिकी ने बड़ी अक्लमन्दी से कहा—"इतना रुपया साथ होते हुए शराब पीऊँगा ! भगवान् का नाम लो, जोखिम सिर पर होगी, और ऐसी गफलत करूँगा ।"

और तब दोनों खुशी-खुशी पड़कर सो गये ।

५

* * *

इधर दफ्तर के सामने जो गांव की पंचायत बैठी थी, उसमें बड़ा गुल-गपाड़ा मच रहा था । बात मामूली नहीं थी । आस-पास के सभी किसान मौजूद थे । जिस समय गुमाश्ता मालिकिन से बातें कर रहा था, तो वे लोग अपनी-अपनी बात लेकर इस जोर से चिल्लाते थे, कि आवाज अक्सर महल तक पहुँच जाती थी ।

बोल तो बहुत से रहे थे, लेकिन थियोडोर रेज़न बढ़ई सब से बाजी ले गया । उसके परिवार में दो युवक बालिग़ थे, तो भी वह दतला पर बरस रहा था । बूढ़ा दतला भी अपने बचाव में सब कुछ कहने से चूकता न था, और मानों खम ठोककर कतार से आगे निकल खड़ा हुआ था । कभी हाथ फैलाकर, कभी दाढ़ी सहलाकर इस तरह अनाप-शनाप

बकता था, कि खुद उसी की समझ में न आता था, कि वह क्या कह रहा है। उसके लड़के-भतीजे, जवानी से भरपूर बुत की तरह चुपचाप पीछे खड़े थे। ऐसा जान पड़ता था, मानों चील-झपट्टे का खेल हो रहा है। रेज़न उस पर प्रहार पर प्रहार किये जा रहा था। बल्कि अकेला रेजन ही क्यों, जिस-जिस के घर में जवान लड़के थे, सभी दतला को फटकार रहे थे, झगड़ा इस बात पर था कि तीस साल पहले दतला का भाई भर्ती होकर गया था, और लड़ते-लड़ते मारा गया था। इसके बदले में दतला यह चाहता था, कि चाहे उसके परिवार में तीन बालिग युवक हैं, उसे उन्हीं लोगों की तरह बख्शा जाय, जिनके दो लड़के हों।

दतला के अतिरिक्त कुल जमींदारी में, चार आदमी और ऐसे थे, जिनके तीन बालिग लड़के थे। इनमें से एक तो मुखिया था, जो मालिकिन की आज्ञानुसार छोड़ दिया था, दूसरे के यहां से पिछले साल ही एक आदमी रंगरूट बनाकर भेजा जा चुका था, और बाकी दो में से इस साल एक-एक लिया गया था। दोनों रंगरूटों में से कोई इस पंचायत में आया भी नहीं था। एक की स्त्री अलग कोने में खड़ी, आशा भरे हृदय से देख रही थी, कि शायद कोई आकस्मिक घटना हो जाय और भाग्य का पलड़ा उसकी तरफ झुक जाय। दूसरे रंगरूट का पिता, फटा कोट पहने, दुश्चिन्ता में डूबा हुआ अलग खड़ा था। जितने किसान पंचायत में मौजूद थे, दतला सबसे ज्यादे साहूकार था। उसने सारी उम्र रुपया कमाने में गँवाई थी, और अब आस-पास उसका काफी

आदर-सम्मान था। यही कारण था, कि उसकी एक-एक बात को सब लोग ध्यान-पूर्वक सुन रहे थे।

रेज़ई बढ़ई का रंग काला और कद लम्बा था। इलाके भर में उसका नाम मशहूर था। चलते-चलते लड़ाई मोल लेना, उसकी आदत में दाखिल था। मतलब-बेमतलब, राह-बाट में पंचायत में हर किसी से झगड़ पड़ना उसके बायें हाथ की बात थी। इसीलिए लोग उसके मुँह न लगते थे, और न उसकी बातों में दखल देते थे। इस समय वह पूरे जोर और पूरी तेजी से दतला को डांट-फटकार रहा था। बूढ़ा दतला भी अपनी गम्भीरता से हाथ धोकर जवाब पर जवाब दिये जा रहा था।

पंचायत में और भी बहुत से आदमी मौजूद थे। मौका पड़ा तो आगे कभी इन लोगों का परिचय आप से कराऊँगा। सभी इस तरह चुपचाप खड़े थे, मानों गिर्जे में प्रार्थना सुन रहे हों। दतला के लड़के-भतीजे भी उसके पीछे अ-बोल खड़े थे। बड़ा लड़का इगनट तीस बरस का हो चुका था; दूसरा वालिसी भी, विवाहित था; तीसरा उसका भतीजा एलिजा था, जिसका ब्याह हुए अधिक दिन नहीं गुजरे थे। एलिजा, गुलाबी रंग का एक खूबसूरत जवान था। नया हैट और कोट डांटे, बेफिक्री से खड़ा गाल खुजा रहा था। वाहरे दुर्भाग्य! उस गरीब को क्या पता—कि सारा नज़ला अन्त में उसी पर पड़ेगा!

रेजन ने कहा—"यह फिज़ूल का तर्क है! भाई अगर एक बार फौज में चला गया तो क्या और कोई जावे ही

नहीं ? पिछले ही साल की बात है, बेचारे मिविविच को जाना पड़ा, यद्यपि उसका सगा चचा तब तक जीता-जागता फौज में मौजूद था।"

"तुम्हारे बाप-दादा ने भी कभी जार की खिदमत की है ?" दतला डाँटकर बोला—"और तुम्हीं ने कौन-सा तीर मारा है ! न कभी मालिकिन के काम आए, न पंचायत के! सारा वक्त बकवास और मटरगश्ती में बिता देते हो ! खुद तुम्हारे लड़के तो तुम्हारी ज्यादितियों से तंग आकर अलग हो गये, अब दूसरे के लड़कों को लड़ाई पर भेजने के लिए कहते तुम्हें शर्म नहीं आती ! जानते हो, बन्दे ने पूरे दस साल तो पुलीस की नौकरी की है, उन दिनों की मुसीबत का अन्दाजा मैं ही कर सकता हूँ, और दो बार मेरे घर में आग लग चुकी है—उस वक्त कोई माई का लाल मेरी मदद को न आया। अब जरा भगवान् ने मेहर की नजर की है, और दोनों वक्त भर-पेट रूखी-सूखी रोटी मिलने लगी है, तो आप लोग मेरे सर्वनाश पर तुल गए हैं।......भाइयों, जरा इन्साफ कीजिये, मेरा भाई लड़ता-लड़ता मारा गया, अब अगर मैं थोड़ी रियायत चाहता हूँ, तो क्या अनुचित करता हूँ ? इस दीवाने शराबी की बातों पर आप न जाइये।"

इतने में रेज़न के साथियों में से एक महाशय बोल उठे-"तुम जो बार-बार अपने भाई की बात गाये जाते हो, सो क्या तुम्हें पता नहीं, कि उसे पंचायत की तरफ से नहीं भेजा गया था, बल्कि उसकी गन्दी हरकतों की वजह से खुद जमींदार ने भेजा था। समझे ? इसलिये पंचायत पर तुम्हारा

कोई अहसान नहीं हो सकता !"

इसकी बात पूरी-सी खत्म न हुई थी, कि एक और शुरू हो गई—"यह कही है बात ठिकाने की ! मालिक लोग चाहे जिसे भेजें, पंचायत का इसमें क्या कसूर है ? अब फर्ज करो पंचायत ने तुम्हारे लड़के को भेजना स्थिर किया है, तो तुम्हें यहां जबान्दराजी न करके सीधे मालिकिन के पास ही जाना चाहिए। मुमकिन है, वे तुम पर दया करें। उनके आगे हम लोगों की क्या चल सकती है ? मुझे ही देखो, चाहे मैं अपने घर में अकेला मर्द हूं, लेकिन मालिकिन की आज्ञा हो गई, तो बिना कान-पूँछ हिलाये मुझे जाना पड़ेगा।··· समझे ?" कहने वाले का स्वर कड़वा हो गया, और हाथ हिलाते हुए वह पीछे हट गया।

बहुत-सों ने एक साथ कहा—"यह बात ! यह बात!"

उधर रेजन ने ताने से कहना शुरू किया—"कहिये जनाब, क्या यह सभी दीवाने शराबी हैं ? क्यों, क्या आपने कभी मुझे पिलाई है शराब ? या तुम्हारे साहब-जादे मुझे शराबी कहते हैं—जिन्हें जमाना तड़के-तड़के सड़क के किनारे बेहोश पड़ा देखता है ?···भाइयों, आप लोग इन्साफ करें, और जरूर करें, तीन को छोड़कर आप दो वाले के हक में फैसला दें, बल्कि दो भी क्यों—किसी ऐसे को चुनें, जो अपने घर में अकेला ही हो। हाहा ! हाहा ! तब दतला साहब के साथ ठीक इन्साफ होगा !"

"फिजूल की बात है ! दतला को एक न एक भेजना पड़ेगा !" सब लोगों ने एक साथ कहा।

सहसा किसी ने कहा—"पहले तो यह देखिये, कि मालिकिन क्या कहती हैं। सुनते है, कि वे महल के किसी नौकर को भेजना चाहती हैं।"

इस बात से कुछ देर के लिए शोर बन्द हो गया। लेकिन शीघ्र ही फिर शुरू हो गया, और व्यक्तिगत कटाक्ष और प्रहार होने लगे।

इगनट, जिसके विषय में रेज़न ने कहा था, कि लोग उसे तड़के-तड़के सड़क के किनारे बेहोश पड़ा देखते हैं, बड़ा क्रुद्ध हुआ, और कहने लगा, कि रेजन ने एक दफा किसी बढ़ई के औजार चुरा लिये थे, और जब वह शराब पीकर बेहोश होता है, तो पशुओं की तरह अपनी औरत को पीटता है!

रेज़न गुस्से से लाल होकर आगे बढ़ा, और पूछा—"किसने चुराया?"

"तुमने।" इगनट भी एक कदम आगे बढ़ गया।

"किसने?……तुमने नहीं—?" रेजन क्रोध-विह्वल होकर बोला।

"नहीं; तुमने इगनट ने दृढ़ता से जवाब दिया।

अब तो बात औजारों से बढ़कर एक घोड़े, मेवे की बोरी इत्यादि बहुत सी चीजों तक पहुँच गई। इन दोनों ने क्रोध में भरकर वह-वह बीभत्स बातें कहीं कि अगर उनका सौवाँ हिस्सा भी सच होता, तो न्याय की दृष्टि में वे साइबेरिया भेजे जाने के अपराधी थे।

इधर बूढ़े दतला ने अपनी रक्षा की एक और तरकीब निकाली। उसने चिल्लाकर इगनट को तो किसी तरह शान्त किया, और पंचायत के आगे तर्क पेश किया, कि जिनके तीन लड़के घर पर मौजूद हों, सिर्फ उनके विषय में ही फैसला नहीं होना चाहिए, बल्कि जिन्होंने अपने लड़कों के अलग घर बसा दिए हैं, उन्हें भी विचारणीय समझा जाय !

"वाह ! यह कैसे हो सकता है ? क्या लोगों ने जान-बूझकर अपने जिगर के टुकड़ों को अलग कर दिया है ? परिस्थिति ही ऐसी थी। अब उनमें से किसी को भेजकर क्या उसके बीवी-बच्चों को दुर्दशा के गड्ढे में धकेलना है !" जिन-जिन लोगों ने अपने लड़के अलग कर दिए थे, सब एक साथ बोल उठे।

"देखो दतला, अगर तुम वास्तव में अपने लड़कों को नहीं भेजना चाहते, तो एवजी में किसी को भेजने का प्रबन्ध कर दो। तुम्हारे पास धन है, तुम आसानी से ऐसा कर सकते हो !"

दतला ने अपना कोट शरीर के इर्द-गिर्द कसकर लपेटा और मुर्दों का सा मुँह बनाकर पीछे हट गया।

"जैसे तुमने मेरा धन अपनी आंखों से देखा है !" उसने नाराज होकर कहा—"देखें भला ईगर मिखालोविच क्या खबर लाता है।"

—o—

६

★★★

ऐन उसी वक्त ईगर मिखालोविच महल से बाहर आया। एक साथ बहुत-से सिर ऊपर उठे, और जैसे गुमाश्ते की नजर सब पर पड़ती थी, इस तरह एक साथ ही सब की टोपियां उतर कर हाथों में आ गईं। ईगर मिखालोविच आगे बढ़ा। साफ मालूम होता था कि कुछ कहेगा। उसके हाथ लंबे कोट की सामने वाली जेबों में ला-परवाही से ठुँसे हुए थे, टोपी उसकी माथे तक झुकी हुई थी। दोनों टांगें फैलाए आकर बड़ी शान के साथ खड़ा हुआ। जितने लोग वहां बैठे थे, सब उत्सुकता-पूर्वक उसके मुँह से आवाज निकलने की बाट देखने लगे। जब वह मालिकिन के सामने खड़ा था, तब में और अब में बड़ा भेद था। वह दब्बूपन और दहशत गायब हो गई थी; जैसे बाहर की हवा लगकर पर निकल आए थे!

"मालिकिन का यही फैसला है, भाइयो कि महल का कोई नौकर न भेजा जाय। वे चाहती हैं कि भर्त्ती आप ही लोगों में से हो। कौन-कौन जायें, इसका निर्णय आप स्वयं करें। इस दफा तीन आदमियों की जरूरत है। हिसाब से तो इस इलाके के हिस्से में ढाई आदमी ही आते हैं, पर आधा अगली बार मुजरा ले लिया जायगा। बात एक ही है, आज न सही, कल सही।"

"बेशक! आपका फरमाना बजा है!" बहुत सी आवाजें एक साथ निकलीं।

"मेरे खयाल में," ईगर ने कहा—"खयुंश्किन और वास्कामित्युखिन को तो जाना ही पड़ेगा। भगवान् की ऐसी ही इच्छा जान पड़ती है।"

"बेशक ! बिल्कुल ठीक !" आवाजें फिर निकलीं।

"......तीसरा या तो कोई दतला-परिवार में से होना चाहिए, या फिर किसी दो आदमियों के परिवार में से...... आपका क्या खयाल है ?"

"दतला ! दतला !......" सब चिल्ला उठे—"उसके तीन लड़के बालिग हैं !"

और फिर क्रमशः, शोर बढ़ने लगा, और वही मेवे के बोरे, और औजारों की चोरी की बातें दोहराई जाने लगीं। ईगर मिखालोविच करीब बीस साल से जमींदारी का काम सम्हाले हुए था, और अपने काम में खूब माहिर और अनुभवी हो गया था। पाव घण्टे तक चुप खड़ा, वह इस शोर-शराबे को देखता सुनता रहा। तब उसने सबको एकदम चुप हो जाने का हुक्म दिया, और दतला के भतीजे और बेटों से, चिट्ठियां डालकर किसी एक को स्थिर करने के लिये कहा। चिट्ठियां तैयार की गईं, और एक टोपी में डालकर मिला-जुला ली गईं। तब एक आदमी ने आंख मींचकर एक चिट्ठी उठाली। खोलकर देखा गया—तो एलिजा का नाम था ! सब के सब खामोश हो गये।

"क्या मेरा—? देखूं भला !" एलिजा ने कांपती हुई आवाज में कहा।

सब के सब चुप बैठ रहे। ईगर मिखालोविच ने आज्ञा

दी, कि सब लोग भर्त्ती का चन्दा लावें। यह पुरानी रीति थी, कि जब भर्त्ती होती थी तो फी घर सात कोपेक चन्दा वसूल किया जाता था। तब पंचायत अगले दिन के लिये बर्खास्त की गई। भीड़ छटने लगी। लोगों ने कोना पार करते ही टोपियां सिर पर रख लीं। धीरे-धीरे उनकी बात-चीत और चलने की आवाज भी लुप्त हो गई। गुमाश्ते ने कुछ देर तक जाती हुई भीड़ पर दृष्टि-पात किया, और तब जाकर कोने पर पहुँचे हुए दतला की पीठ पर हाथ रक्खा। दोनों जाकर दफ्तर में बैठे।

"मुझे बड़ा अफसोस है भाई दतला," ईगर ने मेज के सामने एक कुर्सी पर बैठते हुए कहा—"क्या करूँ, कोई उपाय ही न था! ···अब बोलो, एलिजा की एवजी के लिए जिस आदमी का प्रबन्ध किया जा सकता है, तुम उसकी कीमत देने को तैयार हो, या नहीं?"

बूढ़ा बोला कुछ नहीं, सिर्फ स्थिर नेत्रों से ईगर को ताकता रहा।

"अब और कोई उपाय नहीं है," मानों इस स्थिर दृष्टि के उत्तर में ईगर ने कहा।

"एवजी में आदमी खरीद सकता तो मैं बड़ा सुखी होता ईगर मिखालोविच, पर क्या करूँ, मेरी स्थिति तो इस योग्य नहीं। पिछली गर्मियों में दो घोड़ों से हाथ धो चुका हूँ, और अभी-अभी भतीजे की शादी से निबटा हूँ। सच बात तो यह है, कि भगवान् के यहां इन्साफ नहीं···यह हमारे इमान्दारी से रहने का नतीजा है। उसने जो कुछ बुरा-भला कहा, उसके

लिए बेचारे को क्यों दोष दूँ, और क्यों बुरा मानूँ ? (उसका इशारा रेजर की तरफ था।)"

ईगर ने चेहरे पर हाथ का रगड़ा दिया, और जम्हाई ली। जान पड़ता था कि इस झमेले से वह तंग आ चुका है, और अब चाय पीना चाहता है।

बोला—"अरे, मुर्दे आदमी, क्यों व्यर्थ की बातें बनाते हो ! जाकर घर का फर्श खोदो, मैं दावे के साथ कहता हूँ, कि मिनट-भर में ही चारसौ रूबल निकल पड़ेंगे। फिर एवजी के प्रबन्ध का सारा भार मुझ पर रहा।···कल ही वह आदमी मेरे पास आया था।"

"क्या यहीं आया था ?" दतला ने पूछा।

"हां, बोलो तैयार हो—खरीदने को ?"

"क्या बताऊँ, अगर ऐसा हो सकता तो मुझे बड़ा हर्ष होता परमात्मा जानता है······क्या बताऊँ······"

"इगर ने टोका और सख्ती से कहा—"अच्छा, तो सुनोगे बूढ़े, देखो एलिजा ने अब तक कोई शरारत* नहीं की है, और आज या कल, जब मैं कहूँगा, उसे फौरन शहर ले जाया जाएगा। तुम उसके साथ जाओगे, और उसके लिए तुम्हें पूरी जिम्मेवरी लेनी पड़ेगी। परमात्मा न करे, अगर रास्ते में कोई दुर्घटना हो गई, तो याद रखना उसकी जगह तुम्हारे बड़े लड़के को जाना पड़ेगा। सुनते हो ?"

"लेकिन, आप चाहते तो क्या दो आदमी वाले घर से किसी को नहीं भेज सकते थे ?······ईगर मिखालोविच, यह अच्छी बात नहीं है !" वह बोला। क्षण-भर बाद ही नेत्रों

में आंसू भरकर बोला—"पहले तो मेरा भाई गया, और मेरा दायां बाजू तोड़ दिया गया, अब मेरे बच्चों पर शामत आई है। हाय! मैं इस सदमे को कैसे झेलूँगा!"—कहते-कहते वह ईगर के पैरों पर गिर पड़ने को हुआ।

"खैर, तो अपना रास्ता देखो," ईगर बोला—"कुछ नहीं हो सकता, कानून है; हँसी ठट्ठा नहीं। एलिजा पर नजर रखना, तुम उसके लिए उत्तरदायी हो।"

दतला लकड़ी टेकता-टेकता घर चला।

७

* * *

अगले दिन सुबह गजरदम, महल के सामने एक घोड़ा-गाड़ी खड़ी थी। आज पोलिकी की यात्रा होने वाली थी। आज उसने धुले कपड़े पहने थे, पुराने जमाने की एक टोपी निकालकर ओढ़ी थी, और गाड़ी में सबसे अच्छा घोड़ा जोता था। अकुलीना और बच्चे ठण्ड से ठिठुरते हुए, गाड़ी के पास खड़े थे, पोलिकी भीतर गड़ी में जा बैठा था। धीरे-धीरे महल के नौकर और दासियां आने लगीं। किसी ने सुइयां मंगवाईं, किसी ने चाय, किसी ने तम्बाकू और किसी ने तेल। पड़ौसिन बढ़ई की औरत ने थोड़ी शक्कर की फर्मायश की।

सब से निबटकर उसने कोट अच्छी तरह शरीर पर लपेटा, तली में पड़े हुये घास के गट्ठे को हिलाया-डुलाया, शरीर के कपड़ों को फिर सम्हाला, रास हाथ में थामी, और रवाना हो गया।

जाड़े की ऋतु थी, हवा खूब ठण्डी थी, और बर्फ की हल्की-हल्की बारिश हो रही थी। बर्फ की बौछार कभी उसके माथे पर, और कभी उघड़े हाथों पर आकर पड़ती। घोड़ा भी ठण्ड से ठिठुरता हुआ, कान पीछे हटाये, आंखें आधी मीचे, दुलकी से चला जा रहा था।

सहसा बारिश रुक गई। क्षण-भर में ही मौसम साफ हो गया। बर्फ के गाले सड़क के किनारे पड़े दीखने लगे, और सूरज उभरता जान पड़ा। यह सब परिवर्तन होने पर भी पोलिकी गहरे विचारों में डूबा रहा। मालिकिन के स्नेह और विश्वास पर उसे बड़ा आनन्द प्राप्त हो रहा था। वह, जिसे पाजो ईगर और बाकी नौकर-चाकर फौज पर भिजवाना चाहते थे, और जिसको सब दुरदुराया करते थे, और जिसको हमेशा सबसे गन्दा और मुश्किल काम सौंपा जाता था, वही इस समय एक बहुत बड़ी रकम लाने शहर जा रहा है। और वह अस्तबल के सबसे बढ़िया घोड़े, और खास मालिकिन की गाड़ी पर बड़े आदमी की तरह शान से सवार है। वाह! उसके गर्व का क्या ठिकाना! पोलिकी ने हर्ष-विह्वल होकर रास मजबूती से थामी, कोट को और कसकर लपेटा, और गाड़ी में अकड़कर बैठ गया।

आज उसके गर्व का ठिकाना न था। भला पांच-सौ रूबल की रकम क्या ऐसी-वैसी होती है? उसे लाने के लिये वह भेजा गया है। चारसौ बासठ रूबल अपने कोट की जेब में रखने का मौका उसे मिलेगा। अगर वह चाहे तो घर

जाने के बजाय और किसी तरफ जा सकता है, और इस रकम से खूब मौज की जिन्दगी बसर कर सकता है। पर नहीं, वह ऐसा करेगा नहीं; वह तो सब का सब रुपया बड़ी सावधानी से लाकर मालिकिन को सौंप देगा, और शेखी बघारेगा कि इससे भी ज्यादा-ज्यादा रुपया लाने का मौका उसे मिल चुका है। पहली सराय आई, और घोड़ा अभ्यासानुसार ठिठका, तो पोलिको ने चाबुक मार कर उसको आगे बढ़ा दिया। अगली सराय आई, तो भी ऐसा ही हुआ। दिन ढले के करीब वह गाड़ी से उतरा। यह तीसरी सराय थी, और फल वाले की दूकान पास ही थी। यहां उसने घोड़े को अस्तबल में भिजवाया, और खुद खाना खाने पर डट गया। खाना खाते-खाते उसने आस-पास के लोगों पर यह अच्छी तरह प्रकट कर दिया, कि वह कैसे आवश्यक काम से आया है। तब, खा-पीकर बिल और मालिकिन की चिट्ठी लिए हुए फल वाले के पास चला।

फल वाले ने (जो पोलिको की बदनामी सुन चुका था) बड़े ध्यान से मालिकिन का खत पढ़ा, और सन्दिग्ध स्वर में पोलिको से जिरह करनी शुरू की। पोलिको ने गुस्सा दिखाने की कोशिश की, लेकिन असफल रहा, और सिर्फ मुस्कुरा कर रह गया। फलवाले ने फिर दो-एक बार खत पढ़ा, और तब आगा-पीछा सोचकर रुपया उसको दे दिया। रुपया लेकर पोलिको ने भीतरी जेब में रख लिया और वापस सराय में आया। आज उसे बढ़िया से बढ़िया शराब ने भी आकृष्ट

नहीं किया। उसके मन में आज एक अपूर्व गुदगुदी-सी हो रही थी। जिस दूकान में वह कोई अच्छी चीज देखता, खड़ा हो जाता और तब मन में यह कहकर चल देता—"ओह! मैं यह सब कुछ खरीद सकता हूं; पर इस वक्त खरीदना नहीं चाहता।" बाजार में घूमकर उसने सब की फर्मायशों की चीजें खरीदीं, और हर्षित होता हुआ सराय में वापस आया। ब्यालू के बाद उसने घोड़े को नहलाया, और कुछ दाना-चारा डाला। तब वह खाट पर चढ़कर बैठ गया, और जेब में से चारसौ बासठ रूबल के नोट वाला लिफाफा निकालकर बहुत देर तक देखता रहा। लिफाफा मामूली कागज का था, और चपड़े की साधारण मोहरें उस पर लगी हुई थीं। एक बीचों-बीच थी, और चार चारों किनारों पर। एक तरफ को पिघले हुए चपड़े की कुछ बूंदें गिर गई थीं। पोलिकी ने ध्यान-पूर्वक यह सब कुछ देखा, और मन में बैठा लिया। यह विचार करके बार-बार उसका हृदय हर्ष से नाच उठता था, कि उसके हाथ में इतना धन है। उसने लिफाफे को अपनी टोपी की पाड़ में खोंस लिया और टोपी को सिर के नीचे रखकर सो गया। रात-भर उसे नींद न आई, और रह-रहकर वह लिफाफे को छूकर देखता रहा। जितनी बार देखा उसने उसको अपनी जगह पर धरा पाया। उतनी ही बार उसके मन में यह हर्षोन्मादक विचार आया, कि वह तिरस्कृत, लाञ्छित पोलिकी आज कैसा सौभाग्यशाली है।

८

★★★

आधी रात के करीब सराय के दरवाजे पर किसी ने दस्तक दी, और बाहर से बहुत-से किसानों का चीत्कार सुन पड़ा। यह वह लोग थे, जिनके साथ ज़ार को फौज के रंगरूट आ रहे थे। कुल मिलाकर करीव दस आदमी थे। तीन तो रंगरूट, मुखिया, बूढ़ा दतला और कुछ सरकारी आदमी। कमरे में बत्ती जल रही थी, और सराय वाली एक बेन्च पर पड़ी, खर्राटे ले रही थी। आवाज सुनते ही वह झट उठी, और एक मशाल जलाने लगी। पोलिकी भी उठ बैठा, और कमरे में घुसते हुए आगन्तुकों पर दृष्टि-पात करने लगा। सब लोग भीतर आये और बेन्चों पर बैठ गये। सब के सब बिल्कुल शान्त थे। किसी अनजान के लिये यह अनुमान करना भी मुश्किल था, कि किसे भर्ती करके ले जा रहे है। सभी मजे मजे में बातें बना रहे थे, और हँस-हँसकर खाना मांग रहे थे। बेशक, कुछ लोग बिल्कुल चुपचाप बैठे थे, पर इस के प्रतिकूल कुछ बेतरह खुश थे, और शराब के नशे में मदहोश हो रहे थे। इनमें से एक एलिजा भी था, जिसे पहले कभी शराब नसीब भी न हुई थी, और जो अब बेहद मात्रा में पी गया था।

"क्यों भाइयों, अब आराम करें, या कुछ खा पी लें?" —मुखिया ने पूछा।

"खाना!" एलिजा ने कोट उतारकर बेन्च पर बैठते हुए कहा—"थोड़ी शराब मंगाइये।"

"बस बहुत हो चुकी शराब!" मुखिया न संक्षेप में

जवाब दिया और तब और लोगों को तरफ मुड़कर कहा—"भाइयों, आप लोग चुपचाप थोड़ा-थोड़ा भोजन पालें, चिल्ला चिल्लाकर क्यों बेकार दूसरों को नींद हराम करते हैं।"

"मुझे शराब दीजिये," एलिजा ने बिना किसी की तरफ देखे, जोश में भरकर कहा।

और लोगों ने मुखिया की सलाह के मुताबिक काम किया, गाड़ी में से चुपचाप अपना खाना निकाल लाए, और निबट-निबटाकर कुछ जमीन में पड़ रहे, कुछ ने बेन्चों पर लम्बी तानी।

अब एलिजा फिर चिल्लाया—"मुझे शराब दो—मैं कहता हूँ, मुझे शराब दो!"

तब अकस्मात् पोलिकी को देखकर चीख उठा—"पोलिकी! पोलिकी! ओहो दोस्त, तुम यहां कैसे? मैं तो भाई फौज पर जा रहा हूँ···माता और स्त्री से अन्तिम विदा ले आया··हाय! वे कैसी चिल्ला-चिल्लाकर रो रही थीं! इन पिशाचों ने जबर्दस्ती मुझे सिपाही बना दिया है! लाओ तुम्हीं कुछ शराब मुझे दे दो।"

"मेरे पास तो दमड़ी भी नहीं है भाई, मैं कहाँ से लाऊँ शराब?" पोलिकी ने अनुभूति-पूर्ण होकर कहा—"घबराते क्यों हो? क्या जाने तुम छूट हो जाओ।"

"ना भाई, मैं तो हमेशा से हट्टा-कट्टा हूँ, कभी बुखार तक नहीं आया। छूटने की अब जरा भी आशा नहीं है। जार को मुझसे अच्छा सिपाही कहां मिल सकता है भला?"

पोलिकी ने उसे एक किसान की कहानी सुनाना शुरू

की—कि कैसे पांच रूबल नोट को गर्मी से डाक्टर ने उसे छुड़वा दिया ।

एलिजा आगे सरक आया, और दोनों में बे-तकल्लुफी से बातें होने लगीं ।

"ना भाई पोलिकी, सब समाप्त हो चुका, मुझे भी अब घर जाने की लालसा नहीं है । चचा ने जो कुछ किया, अच्छा किया । भगवान् उनका भला करें ! मुझे मालूम है—कि वे लोगों से यह कहते फिरे हैं, मेरी एवजी के लायक उनके पास पैसा नही है ।…नही ! नहीं ! उसे अपने पुत्र का तो मोह था, और पैसा उसे जान से प्यारा था, बस मुझ अभागे को बलिदान का बकरा बनाते उसे दया नही आई ! नही, अब मैं कदापि वापस लौटना नही चाहता । (उसने अधिक खेद के कारण धीमे स्वर में कहा ।) सिर्फ एक ही मलाल रह गया है । मुझे माँ का बड़ा खयाल है । मेरे बिना वह कैसे दिन काटेगी ? हाय ! जब मैं चला था, तो वह और मेरी स्त्री कैसी फूट-फूटकर रोई थीं !! ओफ् ! इन पापिष्ठों ने दुखियाओं का सर्वनाश कर दिया ! हाय ! मेरी स्त्री अब सिपाही की जोरू हो जायगी । अच्छा होता अगर मेरी शादी न होती ! उससे कोई पूछे भला, उसने मेरी शादी ही क्यों की थी ?… वे दोनों दुखिया कल यहां आयेंगी ।"

"लेकिन, ये लोग तुम्हें इतनी जल्दी कैसे ले आये ?" पोलिकी ने पूछा—"मैंने तो कुछ सुना भी नहीं, यह अचानक…"

"क्यों, डरते थे न, कि कहीं मैं कुछ शरारत कर बैठूं !" एलिजा ने अजीब तरह से मुस्कुराकर कहा—"मगर यह उनकी

भ्रांति है ! मैं कोई शरारत नहीं करने का ! सिपाही बनकर जाने का भी मुझे कुछ विशेष दुःख नहीं है; मुझे तो सिर्फ माँ का खयाल···भला उसने मेरी शादी क्यों की ?" उसने स्थिर और विषाद-पूर्ण स्वर में कहा ।

सहसा दर्वाजा खुला, और बूढ़े दतला ने भीतर प्रवेश किया, टोपी उसने हाथ मे ले रक्खी थी, और पैरों में बड़े-बड़े जूते थे । एलिजा की तरफ उसने नजर झुकाकर देखा तक नहीं, और एक बत्ती जलाने में लग गया ।

चचा को देखते-ही एलिजा खामोश हो गया, और विषादयुक्त नेत्रों से बेंच के नीचे देखने लगा । तब मुखिया को लक्ष्य करके कहने लगा—"शराब चाहिये, शराब, थोड़ी शराब लाओ ।" उसकी आवाज से निराशा और उन्माद का भाव प्रकट होता था ।

"शराब, इस वक्त ?" मुखिया ने जवाब दिया—"देखते नहीं, और सब लोगों ने थोड़ी-थोड़ी रोटी खाकर सब्र कर लिया ! तुम्हीं में क्या ऐसे लाल जड़े हैं, जो खाम-खां 'शराब' शराब, पुकार कर परेशान किये जा रहे हो ?"

"मुखिया, अगर शराब न दोगे, तो मैं कुछ शरारत कर बैठूँगा ।"

"तुम इसका दिमाग ठीक नहीं कर सकते ?" मुखिया ने दतला की तरफ घूमकर कहा ।

एलिजा ने सिर झुका लिया, और बड़बड़ाकर कहा—"शराब ! दो···शरारत करूँ...!"

"होश में आओ, एलिजा ! मुखिया ने नरमी से कहा—

"बस, बहुत हो चुका अब होश करो !"

पर उसकी बात समाप्त होने के पहले ही एलिजा कूदकर खिड़की के पास जा पहुँचा, और मुक्का मारकर पल्ले का शीशा तोड़ डाला। फिर बड़े जोर से चीख कर बोला—"नहीं सुनते तो, यह लो।"

पोलिकी पलक मारते अंगीठी के पीछे जा छिपा। मुखिया बे-तहाशा एलिजा की तरफ दौड़ा, दतला ने धीरे-से बत्ती जमीन पर रख दी, और जीभ से आवाज पैदा करता हुआ एलिजा के पास जा पहुँचा। एलिजा, मुखिया और सराय के आदमियों के साथ खेंचा-तानी कर रहा था। उन लोगों ने उसे कस कर पकड़ रक्खा था, और खिड़की से अलग खींचने की कोशिश कर रहे थे, लेकिन जैसे ही उसने दतला को देखा, उसके शरीर में मानो दस गुनी ताकत आ गई, और मुट्ठियां कसकर दांत पीसते हुए वह आगे बढ़ा। बोला–"वहीं रह, ओ शैतान !...तूने मेरी शादी ही क्यों होने दी ?.. पीछे हट, पीछे ! मैं तुझे मार डालूँगा !"

एलिजा का स्वर वीभत्स हो उठा था। चेहरा उसका लाल सुर्ख था, आंखें घूम रही थीं, और उसका पुष्ट शरीर जोर-जोर से थर्रा रहा था। ऐसा जान पड़ता था कि वह अपना मुकाबला करने वाले तीनों आदमियों की हत्या कर देगा।

वह दतला की तरफ देखकर फिर चिल्लाया—"नर-पिशाच ! तू अपने सगे भाई का रक्त पी रहा है !—सगे भाई का !!"

दतला का मुँह लाल हो उठा। वह एक कदम आगे

बढ़कर बोला—"तो तुम सीधी तरह नहीं मानते ?" कहते-कहते उसने आश्चर्यजनक तेजी के साथ एलिजा को कसकर पकड़ लिया और मुखिया की मदद लेकर उसके हाथ रस्सी से जकड़ दिये। पांच मिनट तक खूब खेंचा-तानी हुई। तब दतला उठा, और दूसरे किसानों की मदद से, बेबस एलिजा को उठाकर एक बेंच पर बैठा दिया।

"मैंने पहले ही कहा था, कि शैतानी करोगे तो नतीजा बुरा होगा।" दतला ने जोर-जोर से हांफते हुए कहा—"मैंने गुनाह ही क्या किया ? एक दिन तो हम सभी को मरना है !..." कहकर उसने और रस्सी मंगाकर एलिजा को अच्छी तरह जकड़ दिया, और बत्ती उठाकर घोड़ों की देखभाल करने चल दिया।

एलिजा अर्द्ध-मूर्च्छित सा इधर-उधर ताकने लगा। नौकर टूटे हुए शीशे चुनने लगा। मुखिया फिर अपने बिस्तर पर जा बैठा।

"ओह, एलिजा, एलिजा ! मुझे तुम्हारे ऊपर बड़ा तरस आता है ! पर किया क्या जाय ? तुम्हारे दूसरे साथियों में से भी एक विवाहित है। कोई आशा नहीं—हाय ! अब कुछ नहीं हो सकता।"

"सब उसी मेरे शैतान चचा की बदौलत हुआ है, उसी ने मेरा सर्वनाश किया है," एलिजा ने व्यग्र होकर कहा—"उसे अपने रुपये का सबसे ज्यादा मोह है ! मां कहती थी, कि गुमाश्ते ने उससे कोई एवज़ी खरीदने के लिये कहा था। पर उसने नहीं माना। जैसे मैंने और मेरे भाई ने जो कुछ कमा-

कमाकर उसे सौंपा, उसकी कुछ बिसात ही न थी !...अरे ! शैतान !"

उधर दतला कमरे में वापस आया, बैठकर थोड़ी देर प्रार्थना करता रहा, फिर बिस्तरा बिछाकर मुखिया के पास बैठ गया। एलिजा उसे देखते ही चुप हो गया, आंखें बन्द करके लेट गया। मुखिया ने चुपचाप सिर हिलाते हुए उसकी तरफ संकेत किया। दतला ने हाथ हिला-हिलाकर कहना शुरू किया—"बताओ भला, कौन ऐसा पाजी होगा, जिसे रंज न होगा !...मेरे सगे भाई का लड़का है, और मुझे ही रंज न हो !...लोग तो यह समझते हैं, कि मैं पिशाच हूं, राक्षस हूं, पापी हूं !...और तो और खुद उसकी बहू ही ऐसा समझती है, और ऐसे ही विचार उसने इसके दिमाग में भर दिये हैं ! यह समझता है कि मेरे पास इसका एवज़ी खरीदने लायक पैसा मौजूद है !...खैर, वह चाहे कुछ भी कहे, मैं बुरा न मानूंगा—आखिर मेरा ही तो लड़का है !"

"लड़का तो बड़ा अच्छा है बेचारा !" मुखिया ने द्रवित कण्ठ से कहा।

"......और मैं तो अपने भरसक सब कुछ करूंगा। कल जाकर इगनट को भेजूंगा। इसकी स्त्री भी आना चाहती थी।"

"ठीक है—उन्हें भेज देना" मुखिया ने अर्द्ध-स्वगत भाव से कहा—"रुपये की हकीकत ही क्या है, आदमी के आगे तो रुपया-पैसा मैल के बराबर है।"

"वाह ! किसी रुपये वाले से पूछो—रुपया मैल के बरा-

बर है, या क्या है ?" सराय के किसी नौकर ने सिर उठाकर बड़बड़ाते हुए कहा !

"ओह ! रुपया–रुपया ! बड़े-बड़े पापों का जन्मदाता है," दतला ने कहा–"इसके समान घृणित वस्तु कोई नहीं; धर्म-शास्त्रों में भी ऐसा ही लिखा है।"

"हाँ, वह तो सभी कुछ लिखा है,"नौकर ने कहा–"एक आदमी ने मुझे एक व्यापारी की कहानी सुनाई थी, कि उसने सारी उम्र में जोड़-जोड़कर धन के अम्बार लगा लिए थे, और मरती बार भी उसे छोड़ना नहीं चाहता था। मरा, तो उसकी इच्छा के अनुसार सारा धन उसके साथ ही दफना दिया गया। लोगों को मालूम भी न होने पाया, क्योंकि मरती बार उसने लोगों से कहा कि अमुक तकिया मेरे सिर के नीचे रख देना। मरने के बाद वह तकिया कब्र में रख दिया गया। बाद में बेटे-पोतों ने धन की तलाश की, तो धेला भी नहीं मिला। एक लड़के ने अनुमान किया कि हो न हो, माल तकिये में था। मामला ज़ार तक पहुँचा और उसने क़ब्र खोदने की अनुमति दे दी, जानते हो फिर क्या हुआ ? कब्र खोदी गई, तो रुपया-पैसा तो कुछ दिखाई न दिया। हाँ लाश में लाखों कीड़े चलते नजर पड़े। बस, कब्र फिर बन्द क़रदी गई !...देखा तुमने रुपया कैसी बुरी चीज है ! '

"बेशक, रुपया बहुत बुरी चीज है !" और वह उठकर फिर प्रार्थना करने लगा।

जब प्रार्थना खत्म कर चुका तो भतीजे की तरफ देखा, वह सो गया था। दतला खड़ा हुआ, और धीरे से एलिजा की रस्सी खोल दी, और तब पड़कर सो गया।

९

★★★

जब सब खामोश हो गया, तो पोलिकी चुपके-से उठा, और चलने की तैयारी करने लगा। न जाने क्यों रंगरूटों के साथ रात बिताते उसे भय होने लगा। मुर्गे बांग दे रहे थे। पोलिकी का घोड़ा दाना-चारा समाप्त कर चुका था, और अभी अंधेरा ही था, कि वह घर की तरफ चल दिया। जब शहर पनाह से बाहर पहुँचा, तो पोलिकी ने सन्तोष का सांस लिया। अब तक बार-बार उसके मन में यह भाव आ जाता था, कि ऐसा न हो सिपाही उसका पीछा करें, उसे पकड़ लें, और एलिजा की जगह उसे ही रंगरूट बनाकर भेज दें। चाहे यह वहम हो, या भय हो—वह रह-रहकर कांप उठता था, और बार-बार चाबुक फटकार कर घोड़े को सरपट दौड़ने की उत्तेजना देता था। दिन निकलते ही एक लम्बे पादरी से उसकी भेंट हुई, जिसके साथ एक ठिगना मजदूर था। पोलिकी ने इसे एक भयानक अपशकुन समझा, और घबरा गया। उसने घोड़े को और तेज किया, और टोपी उतारकर नोटों के लिफाफे को छूकर देखा। एक बार सोचा—“इन्हें छाती में छिपा लूं!” फिर आप ही आप कहा—“नहीं-नहीं, टोपी में सुरक्षित रक्खे हैं, अब तो उन्हें घर चलकर छेड़ूंगा। घोड़ा दुलकी चाल से चलता रहा। पोलिकी मजे में आकर जरा उठंग गया, और मालिकिन की उस प्रसन्नता और प्रशंसा की कल्पना करने लगा, जो नोट पाने पर उसे हो सकती था। फिर उसे यह भी खयाल था, कि कम से कम पाँच रूबल तो उसे भी इनाम में मिलेंगे ही। उसने फिर

टोपी उतारी, छूकर लिफाफे को देखा, और मुस्कराते हुए सिर पर जमा कर रखली। टोपी के निचले किनारे बड़े ही गन्दे और पुराने थे। अकुलीना ने एक जगह से तो सीकर लाज ढांक दी थी, पर अब दूसरी जगह से जरा-सा छेद हो गया। अंधेरे में पोलिकी ने लिफाफे को ज्यों-ज्यों भीतर घुसेड़ने की कोशिश की, त्यों-त्यों वह छेद बढ़ता गया, और लिफाफे का कोना बाहर निकल आया।

दिन निकल आया था, ठण्डी हवा बह रही थी, मौसम सुहावना था। पिछली रात पोलिकी ने पलक न झपकाई थी, इसलिए अब उसे हठात् नींद ने आ घेरा। महल जब थोड़ी दूर रह गया, तो उसकी नींद खुली। उठते ही उसका हाथ टोपी पर पड़ गया। पर उसे अच्छी तरह जमी पाकर उसने ख़याल किया, लिफाफा भी सुरक्षित है। यह सोचकर उसने घोड़े की पीठ पर चाबुक छुआया, गाड़ी में अस्त-व्यस्त पड़ी हुई घास को ठीक किया, और शान के साथ इधर-उधर देखता हुआ, जमकर बैठ गया।

“वह सामने रसोई है; वे नौकरों के मकानात! वह पड़ौसिन बढ़ई की औरत कपड़ा हाथ में लिये खड़ी है; वह दफ्तर रहा, वह मालिकिन का कमरा है, वहीं तो उसे जाना है वहीं जाकर तो उसे अपनी विश्वस्तता का प्रमाण देना है, वहां जाकर तो उसे स-गर्व कहना है—“सरकार, दुनियां किसी के विषय में चाहे जो कुछ कह सकती है!” फिर मालिकिन जवाब में कहेगी—“तुम बेफिक्र रहो पोलिकी, कोई तुम्हारा कुछ नहीं बिगाड़ सकता। लो यह पांच रूबल (या शायद

तीन—और शायद आठ या दस) इनाम देती हूँ।" कहकर वह नौकरों को हुक्म देगी, कि मुझे शराब या चाय दी जाय। ठण्ड भी तो बहुत पाई है, दोनों चीजों में से कोई भी नुकसान न देगी। अगर दस रूबल मिल गये तो आनन्द आ जायगा। एक जोड़ा तो बूट खरीदूँगा, साढ़े चार रूबल निकिल के चाहियें, वे चुका दूँगा, बाकी कुछ बचेगा तो बच्चों के कपड़े-वपड़े बन जायेंगे।"

जब घर कोई सौ कदम रह गया तो उसने कोट को कसकर लपेट, कालर ठीक किया, टोपी सिर से उतारी, बाल सँवारे और बड़े इतमीनान के साथ टोपी के भीतर हाथ दिया। हाथ तेजी और आसानी के साथ भीतर घुमने लगा। यहां तक कि उँगलियां दूसरी तरफ निकल आईं। पोलिकी का चेहरा जर्द हो गया। लिफाफे का कहीं पता नहीं था।

पोलिकी ने झट घोड़ा ठहराया और गाड़ी में पड़ी हुई, घास में और शहर से लाई हुई चीजों में लिफाफे को तलाश करने लगा। पर लिफाफा न मिलना था, न मिला...।

"हे भगवान! यह क्या हुआ?...अब क्या होगा?..." उसने भय-विह्वल होकर आप ही आप कहा और सिर के बाल उखाड़ने शुरू किये।

लेकिन फिर सोचा, महल से कोई उसे देख न ले। इसलिए टोपी फौरन सिर पर जमाली, गाड़ी को पीछे घुमाया, और असन्तुष्ट और आश्चर्यित घोड़े की पीठ पर चाबुक पटकाता हुआ वापस चल पड़ा।

उसकी आंखों से आंसू बह रहे थे, और चिल्ला रहा था “हाय दुर्भाग्य ! हाय भगवान् !”

१०

★★★

उस दिन सुबह से शाम तक किसी ने पोलिकी को महल में न देखा। खाना खाने के बाद मालिकिन ने कई बार उसके विषय में पूछ-ताछ की, और अक्षतका कई बार दौड़ती हुई अकुलीना के पास आइ। लेकिन सबसे यही मालूम हुआ कि पोलिकी अब तक वापस नहीं लौटा।

अकुलीना बहुत चिन्तित थी। आखिर हुआ क्या ? रास्ते में कोई दुर्घटना तो नहीं हुई ? फल वाले ने रुपया देने में ढील तो नहीं की ? इसी तरह के बहुत से भाव उसके मन मे आते रहे। दिल उसका रह-रहकर भर आता था और किसी काम में मन न लगता था। एक बात से वह और भी व्यग्र थी। बढई की स्त्री ने उससे कहा था, कि सुबह के वक्त उसने पोलिकी को घर के पास तक आते, और फिर तुरन्त लौट जाते देखा था। बच्चे अलग उसके या मिठाई के इन्तजार में परेशान थे।

उधर मालिकिन ने ईगर मिखालोविच से बार-बार पूछा—“पोलिकी अभी तक नही आया ?” क्यो नही आया ?” इत्यादि। ईगर न अपने अनुमान पर मन ही मन प्रसन्न होते हुए जवाब दिया—“अभी तो आया नहीं, न जाने क्या हुआ !” फिर मानो सोच मे पड़कर बोला—“उसे तो हद से हद दोपहर तक आ जाना चाहिये था।”

दिन भर पोलिकी की कोई खबर नहीं मिली। तीसरे पहर के करीब कुछ किसानों की जबानी मालूम हुआ कि वह नंगे सिर, नंगे पैर सड़क पर बदहवास दौड़ता हुआ जाता था और हर किसी से पूछता था—"तुमने कोई लिफाफा तो नहीं देखा है?" दूसरे आदमी को जबानी मालूम हुआ, कि वह एक जगह सड़क-किनारे बेहोश पड़ा था, और पास ही एक सूखा घोड़ा और धूल-सनी गाड़ी बधे हुए थे। उस आदमी ने कहा—"मैं तो यह समझा, शराब के नशे में अण्टा-गाफिल है, इसलिये कुछ न बोला।"

रात बीत गई, और पोलिकी न आया। अकुलीना की पलक भी न झपकी। जरा-सी आहट पर उसके कान खड़े हो जाते। सुबह हो गई, मुर्गे बाँग देने लगे, पड़ौसिन जाग पड़ी। अकुलीना भी उठी, और अंगीठी की आग को चैतन्य करने लगी। फिर बर्तन मांजे, नहाई-धोई, बच्चों को जगाया घर साफ किया। यह सब काम करते-करते भी उसके कान किसी आहट पर ही लगे थे। सूरज निकल आया, गिर्जे में घण्टे बजने लगे, बच्चे शोर मचाने लगे, पर पोलिकी तब भी न लौटा।

अकुलीना चिन्ता सागर में डूबी हुई खिड़की के पास खड़ी हो गई। सहसा बड़ी लड़की की आवाज कान में पड़ी—"पिताजी आ गये!" उसने चमककर पीछे देखा तो पोलिकी! अजब हालत थी! मुँह ज़र्द था, आंखें धंसी हुई थीं, और ऐसा मालूम पड़ता था कि अभी-अभी रो पड़ेगा, या जोर से हँस पड़ेगा!

वहीं खड़े-खड़े वह बोली–"क्यों पोलिकी, राजी खुशी...?"

पोलिकी ने बड़बड़ाकर कुछ कहा, जो अकुलीना की समझ में न आया।

"क्योंजी ?" उसने पूछा–"मालिकिन के पास होकर आये हो, नहीं ?"

पोलिकी बिस्तर पर बैठ गया, और अजीब तरह की पाप-पूर्ण मुस्कान उसके मुँह पर प्रकट हूई। बहुत देर तक उसके मुँह से कुछ न निकला।

"क्यों जो, इतनी देर कहां लगा दी ?"—अकुलीना ने फिर पूछा।

"हाँ, अकुलीना, मैंने रुपया लाकर मालिकिन को दे दिया ! उसे बड़ी खुशी हुई !" सहसा पोलिकी बोल उठा। अकुलीना उठकर चली गई। वह व्यग्र भाव से इधर-उधर ताकने लगा। छत से एक रस्सी लटक रही थी। उसकी दृष्टि उस रस्सी पर जाकर ठहर गई। हठात् वह उठ खड़ा हुआ, और गिरह खालकर रस्सा खींच ली। इतने में रोटियां लिए अकुलीना ने प्रवेश किया। पोलिकी ने शीघ्रता-पूर्वक रस्सा को कपड़ों में छुपा लिया, और बिस्तर पर बैठ गया।

"क्या बात है, पोलिकी ?–आज कैसे हो रहे हो ?" अकुलीना बोली।

"सोया नहीं हूँ।" उसने संक्षेप में उत्तर दिया।

सहसा खिड़की के आगे से बिजली-सी कौंध गई, और क्षण-भर बाद तितली की तरह उड़ती हुई अक्षतका ने कमरे में प्रवेश किया।

"मालिकिन ने पोलिकी को इसी दम बुलाया है, बोली—'इसी दम'...मालिकिन का हुक्म है, इसी दम......!"

पोलिकी ने एक बार अकुलीना को ताका, दूसरी बार छोटी बच्ची को। फिर बोला—"आता हूँ। अब और क्या चाहती हैं?" पिछला वाक्य उसने अकुलीना को भ्रम में डालने के लिए कहा। और बोला—"शायद इनाम देने को बुलाती हैं। अक्षतका, कहना अभी आया!"

वह उठा, और बाहर चल दिया। अकुलीना ने टब में पानी भरा, और छोटी बच्ची से कहा—"यहाँ आ मेरी, तुझे नहला दूँ।"

बच्ची नहाने का नाम सुनकर रोने लगी।

"आ मेरी बेटी, आ—खिलौना दूँगी। जल्दी आ, देर न कर, अभी तेरे भइया को भी नहलाना है।"

उधर पोलिकी अक्षतका के पीछे-पीछे महल नहीं गया, बल्कि उसने एक नया ही रास्ता पकड़ा। बीच में छत से लगी हुई लकड़ी की सीढ़ी रक्खी हुई थी। पोलिकी ने वहीं ठहर कर चारों ओर देखा, और आस-पास किसी को न पाकर झट सीढ़ी पर चढ़ गया।

"पोलिकी आया क्यों नहीं अभी तक?" उधर मालिकिन ने दासी से प्रश्न किया—"है कहाँ वह? क्यों नहीं आया?"

अक्षतका फिर उड़ चली, और मालिकिन का सन्देश सुनाया।

"वाह! उन्हें तो गये बहुत देर हुई," अकुलीना ने जवाब दिया। बच्ची को वह नहला चुकी थी, और दूध पीती छोटी लड़की को टब में बैठा रही थी। बच्ची रोती थी, चिल्लाती

थी, और अपने छोटे हाथ फैलाकर किसी चीज़ को पकड़ने की व्यर्थ कोशिश करती थी। अकुलीना ने एक हाथ से उसकी जरा-सी कमर थाम ली, और दूसरे हाथ से मल-मलकर नहलाने लगी।

"जरा देखना बीबी, कहीं जाकर सो तो नहीं गये हैं!" उसने उत्सुक होकर इधर-उधर ताकते हुए कहा।

उसी वक्त पड़ौसिन लहंगा उठाये छत पर गई। कुछ चीज़ सूखने के लिए उसने धूप में डाली थी। सहसा छत से भयानक चीख़ की आवाज आई। बढ़ई की औरत चार-चार सीढ़ियों के बाद पैर रखती, गिरती-पड़ती, चिल्लाती वापस लौटी।

"पीलिकी......" उसने घिघियाकर कहा।

अकुलीना के हाथ से बच्ची छूट गयी।

"......ने फांसी लगाली।" बढ़ई की स्त्री ने वाक्य पूरा किया।

अकुलीना बच्ची को भूलकर उधर दौड़ी। इधर बच्ची धड़ाम से टब में उलट गई।

"फांसी लगाकर...मर गया।" पड़ौसिन ने दौड़ते-दौड़ते कहा। पर अकुलीना को देखकर वह रुक गई।

अकुलीना बिजली की तरह सीढ़ी पर चढ़ गई, और क्षण भर में उधर जा पहुँची। पर तुरन्त ही उसने एक भयानक चीख़ मारी, और मूर्च्छित होकर लुढ़क पड़ी। अगर इधर-उधर से दौड़ कर आए हुए आदमी झपट कर उसे सम्हाल न लेते, तो वहीं उसका भी खात्मा हो जाता।

११

* * *

थोड़ी देर ऐसी गड़बड़ी रही, कि कुछ न होसका । खासी भीड़ इकट्ठी होगई थी । हरेक आदमी ज़ोर-ज़ोर से चिल्ला रहा था, औरतें आतङ्क से काँप रही थीं । अकुलीना बेहोश होकर गिर पड़ी । आखिरकार, किसी तरह सम्हलकर एक पड़ौसी और गुमाश्ता ईगर मिखालोविच सीढ़ी पर चढ़कर ऊपर पहुंचे । इधर बीसवीं दफ़ा बढ़ई की औरत ने अपनी कहानी सुनानी शुरू की—कि कैसे वह निश्शङ्क भाव से, सूखा कपड़ा उठाने सीढ़ी पर चढ़ी, कैसे उसने इधर-उधर नज़र फेंकी तो एक आदमी लटकता हुआ नजर आया । कैसे उसने आँखें मल-मलकर देखा, जब अनुभव किया, कि आत्म-हत्या का मामला है, तो कैसे वह एक-बारागी जर्द पड़ गई ! फिर कैसे वह नीचे उतरी, इसका उसे होश नहीं । भगवान ने ही उसकी रक्षा की ! ओफ् ! इतने ऊँचे से उतरने में वह गिरी नहीं——यह उसका कितना-बड़ा सौभाग्य था !

जो आदमी ऊपर गये थे, उन्होंने भी ऐसी-ही कहानी सुनाई । पोलिकी ऊपर के कमरे की एक कड़ी में रस्सी बाँध कर लटक गया था, और प्राण खो चुका था । अकुलीना होश में आई, और सीढ़ी की तरफ झपटी । पर लोगों ने उसे रोक लिया ।

सहसा पीछे से बच्चा चिल्लाया—"माँ ! माँ ! बेबी, डूब गई !" अकुलीना एक-दम उधर दौड़ पड़ी । बच्ची टब में औंधी पड़ी हुई थी, शरीर निश्चेष्ट था, और पैर हिलते न

थे। अकुलीना ने उसे फौरन् बाहर खींच लिया, पर न तो उसने साँस लिया, और न बोली। तब उसने बच्ची को बिस्तर पर डाल दिया, और कुहनियाँ टेककर इतने बीभत्स भाव से हँसी, कि बड़ी लड़की ने भयभीत होकर कानों में उँगलियाँ ठूँस लीं। लोग-बाग दोड़कर उधर-ही आये। उन्होंने बच्ची के शरीर को उठाकर उपचार करना शुरू किया, पर सब बेकार हुआ। अकुलीना बिस्तरे पर उछल-उछलकर इतने जोर-जोर से हँसने लगी, कि जितने आदमी वहाँ मौजूद थे, सब भयभीत हो गये। कोई रोता था, कोई फुस-फुस करता था कोई खेद-पूर्ण मुद्रा-बनाये, अलग खड़ा था। बढ़ई की स्त्री अपनी कहानी सुनाने में ही व्यस्त थी। ईगर ने पादरी और सिपाहियों को बुलाने के लिये आदमी भेजे। अक्षतका, पत्थर की मूर्ति की तरह एक तरफ चुपचाप खड़ी थी। दूसरी दासी अगैथा रो-रोकर पागल हो रही थी। बाकी औरतें अकुलीना के गिर्द खड़ी हुई, खेद-पूर्ण नेत्रों से उसे ताक रही थीं। बच्चे एक कोने में सिकुड़े हुए, माँ की सूरत देख-देखकर बिलबिला रहे थे। बाहर बड़ी-भारी भीड़ लग गई थी, और तरह-तरह के बे-सिर-पैर के क़यास भिड़ाये जारहे थे। किसी ने कहा—बढ़ई ने अपनी औरत की टांग काट दी; दूसरा बोला--रसोइये की बिल्ली पागल हो गई है, और उसने कई आदमियों को काट लिया है; तीसरा झट बोला–नहीं जी, यह बात नहीं······ यह है। जब कुछ देर बीती, तो सच्ची बात क्रमशः सभी पर प्रकट हो गई, और सब चुप हो गये। धीरे धीरे बात मालिकिन के कानों-तक पहुंची। सुनते ही वह तुरन्त घटना-स्थल पर आई। सब लोग उसे देखने को उत्सुक हो उठे। मालि-

किन ग़मगीन सूरत बनाये भीतर गई। जाकर उसने अकुलीना का हाथ थाम लिया। पर अकुलीना ने तुरन्त झटका देकर हाथ छुड़ा लिया।

'अकुलीना !" मालिकिन ने स्निग्ध स्वर में कहा–"देखो, तुम्हारे सिर पर कई बच्चों का बोझ है, हिम्मत न हारो ! जो-कुछ होना था, हो चुका !"

अकुलीना ठठाकर हँस पड़ी, और उठ खड़ी हुई। कहने लगी—"मेरे बच्चे.........सब चाँदी हैं, चाँदी, नोट नहीं ! मेरे पास तो एक भी नोट नहीं है। मैंने पोलिकी से पहले-ही कहा था---नोट एक मत लेना, सब नकद रुपये लेना, जो अगर कहीं गिरे भी, तो आवाज़ तो हो जाय।...... ओहो ! मैंने पहले-ही कहा था.........!" कहती-कहती वह ज्यादे जोर-से हँसने लगी।

मालिकिन ने सिर घुमाया। मुँह से बोली—"थोड़ा ठंडा पानी चाहिये।" --और तुरन्त-ही वह पानी की खोज में इधर उधर देखने लगी। सहसा उसकी नजर छोटी लड़की के मृत शरीर पर पड़ गई। देखते-देखते उसकी आँखों में आँसू भी आये। लोगों ने उस दिन समझा, कि मालिकिन का हृदय कितना द्रव-पूर्ण, और स्नेह-पूर्ण है !

मालिकिन सिसकी ले-लेकर रोने लगी, और थोड़ी देर में-ही मूर्च्छित हो कर गिर पड़ी। लोगों ने आगे बढ़कर उसे सम्हाला, और उठाकर महल की तरफ ले चले। भीड़ फिर छटने लगी। अकुलीना का हँसना और वाही-तबाही बकना

अब भी जारी था। लोग उसे दूसरे कमरे में ले गये। डॉक्टर ने उसकी परीक्षा की, सिर पर बर्फ़ रक्खी, और ऊपर से पट्टी कसी। पर उसके होश-हवास ठिकाने न हुए। रोने के नाम तो उसकी आँखों से एक आँसू न निकला। हाँ हँसती बेहद थी, ऐसी-ऐसी बातें कहती थी, कि जो लोग उसकी परिचर्या कर रहे थे, वे भी हँसे-बिना न रह सकते थे।

१२

★★★

अगले दिन छुट्टी थी, पर छुट्टी का कोई चिह्न दिखाई न पड़ता था। मौसम उस दिन बढ़िया था, पर कोई मनोरंजन या सैर के लिये घर से न निकला; किसी लड़की के मुँह से गाने की आवज न निकली; जो लोग शहरों में नौकर थे, और छुट्टी का दिन घर पर बिताने आये थे, उनके ठहाके की आवाज भी उस दिन सुनाई न पड़ती थी। सब लोग अपने अपने घरों में चुपचाप बैठे थे। अगर कोई आपस में कुछ बात करता भी था, तो इस तरह डरते-डरते जैसे किसी ने सुन ली, तो खा-ही जायगा! दिन में तो यह निस्तब्धता खैर ज्यादे न अखरी, पर जब दिन छिपा, अँधियारी बढ़ती आई, कुत्ते भौंकने लगे, और खूब जोर-जोर से हवा चलनी शुरू हुई, तब तो लोग एक-बारगी ऐसे थर्राये, कि झट लाल्टेनें जला लीं, और दबककर बैठ गये। जो लोग अकेले थे, वे पड़ोसी के घर जाकर रात-भर ठहरने की अनुमति माँगने लगे। जिनको उस दिन किसी काम से बाहर जाना था, उनकी हिम्मत किसी तरह दर्वाजे के बाहर कदम रखने की न हुई। सारी रात लोगों ने

पवित्र जल[*] पी-पीकर बिता दी। कुछ लोगों ने अजीब और भयानक सपने देखे। पोलिकी के घर में उस दिन कोई न था। पगली अकुलीना और बच्चों को लोग दूसरी जगह ले गये थे। सिर्फ छोटी लड़की की मृत देह वहाँ पड़ी रह गई थी। बढ़ई की स्त्री ने एक मित्र को मेहमान बनाया था, और हफ्ते-भर के लिये जो चाय रक्खी हुई थी, वह एक रात में ख़त्म कर डाली। फिर भी उसे और उसके मित्र को रात-भर डर लगता रहा।

मतलब यह, कि आस रहनेवाले सभी आदमियों को रात--भर पोलिकी के उपद्रवों की कल्पना ने परेशान रक्खा। पर पोलिकी का शरीर सारी रात उसी जगह लटका रहा। महल में तो वह बुरी हालत थी, कि देखकर हँसी आ जाय। मालिकिन तो बेचारी इस आकस्मिक घटना के कारण अस्वस्थ थीं। दनियाशा उनके लिये औषधि गर्म कर रही थी। वह रात चूँकि भयावनी थी, इसलिये उसकी चाची रात-भर ठहरने के लिये आगई थी।

अकस्मात् दनियाशा ने पूछा---"थोड़ा तेल चाहिये; कोई जाओ।"

दूसरी दासी ने ताबड़-तोड़ जवाब दिया---'मैं तो जाने से रही!"

---

[*] हिन्दुओं के गंगा जल की तरह, पादरियों के द्वारा पवित्र किया हुआ जल भी ईसाइयों में विघ्न-नाशक समझा जाता है।

"पगली कहीं को ! अरे, तू और अक्षतका चली जाना !"

"मैं ? अज़ी मैं तो अकेली-ही भागती चली जाऊंगी ! मैं किससे डर सकती हूं !" कहते-कहते अक्षतका भय-से पीली पड़ गई।

"अच्छी बात है, तो फिर जाओ, ग्रेनी अन्ना से कहना थोड़ा सा तेल देदे। जाओ, ज्यादा दूर नहीं है; यही सामने तो है।"

अक्षतका ने एक हाथ से लहँगा उठाया, और एक-ही हाथ को घंटे के पेण्डुलम का रूप देकर चल खड़ी हुई। वह खूब सशंक थी, और सोचती थी, कि रास्ते में किसी की आवाज अगर कान में पड़ गई, तो वह डर-से प्राण-ही देदेगी ! खैर, उसने किसी तरह हिम्मत की, और आंखें बन्द करके, चिर-परिचित रास्ते पर पूरी तेजी से भाग चली।

"मालिकिन सो तो नहीं गई ?" सहसा एक भारी और गँवारू आवाज अक्षतका के कान में पड़ी। अब तक उसकी आँखें बन्द थीं, सो अब उसने खोल दीं, और देखा—पास-ही कोई लम्बी मनुष्य-मूर्त्ति खड़ी है। उसने जोर-से चीत्कार किया, और इतनी तेजी से वापस भागी कि, लहँगा उड़कर सिर पर जा पहुंचा। एक साँस में वह दनियाशा के पास पहुंच गई, और बिछौने पर पड़कर जोर-जोर से हांफने लगी। दनियाशा, उसकी चाची, और दूसरी दासी भय के कारण मृत-प्राय हो गईं, और अभी वे पूरी तरह सम्हल न पाईं थी, कि दर्वाजे पर किसी के पैरों की चाप सुनाई दी। दनियाशा दौड़कर मालिकिन के पास जा पहुंची,

दूसरी दासी अरगनी पर टंगे कपड़ों के पीछे छिप गई, दनियाशा को चाची हिम्मत करके दर्वाजा बन्द करने के इरादे से उठी। लेकिन बन्द न कर पाई थी, कि किवाड़ चौपट खुल गये, और दतला ने कमरे में प्रवेश किया। दतला ने इन लोगों के भय को तरफ कुछ भी ध्यान न दिया, कोने में बेन्च पर बैठकर मोहर किया हुआ एक लिफाफा जेब से निकाला। दनियाशा की चाची ने दोनों हाथों से कलेजा दबाकर रुकते-रुकते कहा—"वाह भाई, मैं तो डर ही गई थी! मुँह से बात भी नहीं निकलती! मैं तो समझी, आज वक़्त आ पहुंचा......!"

"भला इस तरह घर में आया करते हैं?" कपड़ों की आड़ में-से निकलकर दूसरी दासी ने कहा।

"मालिकिन अलग बेचारी एक-बारगी घबड़ा गईं!" दनियाशा ने लौटकर कहा—"भला तुम बिना-पूछे ज़नानखाने में कैसे घुस आये?"

दतला ने अपने व्यवहार पर खेद प्रगट किये-बिना कहा — मालकिन सो तो नहीं गईं हैं?—मुझे उनसे काम है।"

दनियाशा ने उत्तर दिया—"उनकी तबियत अच्छी नहीं है।"

सहसा अक्षतका खिलखिलाकर हँस पड़ी। उसका यह हँसना यहां-तक बढ़ा, तकिये में मुहँ छिपा लेने पर भी रोके न रुका। दनियाशा और उसकी चाची ने बहुतेरा मना किया, पर हँसी का प्रवाह बन्द न हुआ।

दतला ने घूमकर एक बार स्थिर-नेत्रों से उसे ताका

श्रौर फिर श्रपनी बात शुरू की—"देखो, बड़ा-ही जरूरी काम है। बस, तुम जाकर इतना कह दो, कि एक किसान श्राया है, श्रौर उसे नोटों का एक लिफाफा पाया है"

"कैसा नोटों का लिफाफा ?"

जाने के पहले दनियाशा ने लिफाफे पर लिखा हुश्रा पता पढ़ा, जिसे कि पोलिकी को लाना चाहिये था। उत्तर सुनकर दनियाशा बिजली की तरह मालकिन के पास भागी; पर जब वापस लौटकर यह खबर सुनाई कि मालिकिन उससे भेंट करना नहीं चाहतीं, तो दतला के श्रचरज का ठिकाना न रहा।

मालकिन ने कहा था—"न मैं कुछ जानती हूं, न जानना चाहती हूं। कौन दतला है ? ......कैसे नोट हैं ? ... इस वक्त न मैं किसी से मिल सकती हूं, न मिलना चाहती हूं। उससे कहो, वह जाये श्रौर मेरी शान्ति में विघ्न न डाले।"

"श्रब मैं क्या करूं भला ?" दतला ने लिफाफा श्रलटते-पलटते कहा—"मामूली रकम तो है नहीं।......हाँ, क्या लिखा है ?"

श्राखिरी वाक्य दनियाशा के प्रति कहा गया था, जो फिर उस पर लिखा हुश्रा पता पढ़ रही थी।

दतला कुछ संशय में पड़ गया। उसने सोचा—कहीं ऐसा न हो, लिफाफा मालिकिन का न हो; श्रौर उसने पता पढ़ने में भूल खाई हो। पर दनियाशा ने पढ़कर उसका संशय दूर कर दिया, श्रौर उसने लम्बी साँस लेकर लिफाफा भीतर की जेब में रख लिया। उठने का उपक्रम करते हुए

बोला--"मालूम होता है जाकर कोतवाली में दाखिल करना पड़ेगा।"

"जरा ठहरो ! मैं एक बार फिर कह देखती हूं ।" दनियाशा ने कहा--"लाओ, लिफाफा मुझे दो ।"

दतला ने लिफाफा बाहर निकाला, पर दनियाशा के फैले हुए हाथ पर एक-बारगी रखने से उसका मन हिचका। बोला--"उनसे कह देना, दतला ने सड़क पर पड़ा पाया था।"

"अच्छी बात है; लाओ, मुझे दो।"

"पहले तो मैंने सोचा, कुछ नहीं--मामूली खत है, पर पीछे एक सिपाही से पढ़वाया, तो मालूम हुआ कि उसमें नोट हैं ।

"ठीक है, लाओ मुझे दो तो सही ।"

"मैं तो सीधा यहीं आया; घर भी नहीं गया........ दतला ने फिर कहना शुरू किया--"मालिकिन से कह देना ......"

दनियाशा ने लिफाफा उससे ले लिया, और मालिकिन के पास जा महुंची ।

"ओह दनियाशा ! रुपये-पैसे की बात मुझसे मत करो।" मालिकिन ने उसकी बात सुनकर ग्लानि-पूर्ण स्वर में कहा—"उस बच्ची की याद आती है......"

"सरकार, दतला समझा नहीं, कि आप यह रुपया किसे दिलाना चाहती हैं !" दनियाशा कहने लगी ।

मालिकिन ने लिफाफा खोला, और नोटों पर नजर

पड़ते-ही एक-बारगी काँप उठी ! फिर किसी विचार में पड़ गई ।

"ओह ! भयानक……रुपया ! यह रुपया कैसे-कैसे अनर्थ करता है !!" आखिर वह बोली ।

"दतला बाहर बैठा है सरकार, आप उसे जाने की आज्ञा देती हैं, या कुछ देर के लिये दर्शन देने का अनुग्रह करेंगी ?—रुपया तो सब ठीक है न ?" दनियाशा बोली ।

"मुझे इस रुपये की जरूरत नहीं है। यही कम्बख्त रुपया सारे अनर्थ की जड़ है ।……ओह ! कैसी बीभत्स घटना घट गई……! उससे कहो, इन रुपयों को वहीं ले जाय।"कहते-कहते मालिकिन ने दनियाशा का हाथ झकझोरना शुरू किया, और कहा—"उससे कह दो, यह रुपया वही ले जाय, और इसका चाहे जो उपयोग करे।"

"पाँछ सौ रूबल ?", दनियाशा ने अविश्वास की हँसी हँसकर कहा ।

"हां, सबके सब ले जाय ।" मालिकिन ने अधीर हाकर दोहराया—"ताज्जुब की बात है, कि तुम मेरा मतलब नहीं समझतीं ! यह रुपया बड़ा अपवित्र और हेय है । इसके विषय में फिर कभी बात न करना। जिसने यह रुपया पाया है, उसी को दे देना । जाओ, जाओ, चली जाओ ।"

दनियाशा वापस लौटी ।

"सब-का-सब रख लिया ?" दतला ने पूछा ।

"लो, तुम खुद ही गिन लो; हुक्म हुआ है, कि सबका सब रुपवा तुम्हें ही दे दिया जाय ।"

दातल ने टोपी बग़ल में दबाई, और आगे झुककर गिनने

लगा। मुंह से बोला—"तुमने क्यों नहीं गिन दिये ?"

दतला समझा, कि तबियत खराब होने के कारण मालिकिन खुद नहीं गिन सकीं, इसलिये उसे गिनने की आज्ञा दे दी गई है।

"घर जाकर गिनना, रुपया तुम्हारा हो गया !" दनियाशा ने जल्दी-से कहा—"मालिकिन ने ऐसी-ही आज्ञा दी है।"

दतला ने कमर सीधी करके दनियाशा को घूरा।

दनियाशा की चाची आश्चर्य-से वज्राहत रह गई। बोली—"ओ माँ ! ओ माँ ! भगवान् ने इस पर कैसा अनुग्रह किया ! ओ माँ ! ओ माँ !"

दूसरी दासी को तो विश्वास-ही न आया। बोली—"यह कैसे हो सकता है ?—ना बीबी, तुम बहकाती हो !"

"मैं—बहकाऊँगी ? क्यों ? मालिकिन ने सचमुच मुझे ऐसी-ही आज्ञा दी है।...लो भाई दतला, लो अपना रुपया। फिर आप-ही-आप बोली—"यह तो होता-ही आया है, एक को दुःख है, तो दूसरे को...!"

"क्या सच.........पाँचसौ रूबल !" दनियाशा की चाची ने कहा।

"शायद इससे भी कुछ ज्यादा !" दनियाशा ने उत्तर दिया।—"देखो दतला, कम से कम दस कोपेक का एक नोट जरूर दान कर देना।......तुम्हारे पास तो पहले-ही रुपये की कमी नहीं है........."

अब कहीं दतला की समझ में आया, कि दनियाशा जो-कुछ कहती है, सच कहती है, और गिनने के लिये जो नोट उसने इधर-उधर फैला दिये थे, उन्हें इकट्ठा करने लगा। पर

तो-भी उसके हाथ पांव कांप रहे थे, और वह रह-रहकर दासियों की तरफ इस ख़याल से ताकता था, कि कहीं उसे बहकाया तो नहीं जा रहा है।

दनियाशा ने कहा—"देखो तो सही, खुशी के मारे बुड्ढे के हाथ-पैर फूल गये हैं! अरे लाओ, मैं इकट्ठे कर दूँ।"

उसने हाथ आगे बढ़ाया, पर दतला ने मना कर दिया। उसने झटपट सब नोट इकट्ठे कर लिये, और गड्डी हाथ में लेकर खड़ा हो गया।

"इस वक्त तो बड़ी खुशी हो रही होगी?"

"मेरी समझ में-ही नहीं आता, कि क्या कहूँ! सच-मुच...?"

उसने वाक्य पूरा न किया, और हाथ हिलाकर हँसता हुआ बाहर निकल गया।

मालिकिन ने घण्टी बजाई। दनियाशा गई।

"रुपये देदिये?"

"जी हां।"

"बहुत खुश हुआ होगा?"

"खुशी-से पागल-जैसा हो गया था।"

अच्छा, जरा उसे बुलाना। मैं सुनना चाहती हूं, वह लिफाफा उसे कैसे मिला। यहीं बुलालो; मैं बाहर तो जा नहीं सकती।"

दनियाशा बाहर दौड़ी, और रास्ते में-ही दतला को पा-लिया। उसका सिर अभी तक नङ्गा था। नोटों की गड्डी उसने बटुए में न रखकर दांतों के बीच में दबा रक्खी थी। शायद ऐसा इसलिये था; कि उसे अभी तक रुपयों के अपने

हो जाने का पूर्ण विश्वास न था। जब दनियाशा ने आवाज़ दी, तो वह एक-बारगी काँप उठा।

"क्या है ?........क्या बात है जी ? क्या वापस लेना चाहती हैं ? ......तुमने मेरे पक्ष में कुछ भी नहीं कहा ?...अरे मैं तो यह सोच रहा था, कि तुम्हारे वास्ते ढेर-सारा शहद भिजवाऊँगा।"

"बेशक ! ऐसे-ही भिजवाने-वाले बिगड़े हो कहीं के!"

दर्वाजा ठेलकर दतला के साथ दासी भीतर पहुंची। दतला के दिलपर जो बीत रही थी, वही जानता था। बेचारे के प्राण गले में आ अटके थे। कुछ होश नहीं था, कैसे और किधर से जा रहा है। बस, ज्यों-ही मालिकिन के सामने पहुंचा, मानों नींद टूट गई।

मालिकिन ने कहा—"कहो जी दतला........?"

दतला ने विनयावनत होकर कहा—"जो आज्ञा सरकार की !...मालिकिन जी, क़स्म खाकर कहता हूं, मैंने उसे छुआ तक नहीं !...क्या बताऊँ, आपने मेरी ईमानदारी का ही यह पुरस्कार दिया !......बात यह थी, कि मैं आजकल कुछ परेशान भी था। मेरा घोड़ा बिल्कुल बे काम हो चुका है !"

'खैर, तुम्हारी तक़दीर', मालिकिन ने विरक्ति और दया-मिश्रित स्वर में कहा—"रखलो—काम आयेंगे।" दतला मुँह से कुछ न बोला सका, सिर्फ़ आँखें घुमाने लगा।

"मुझे इस बात की खुशी है, कि वह तुम्हें पागया। परमात्म करे, इस रुपये का सदुपयोग हो।...... क्यों, खुश तो हो ?"

"वाह ! भला क्यों नहीं सरकार ? मैं तो इतना खुश हूँ-इतना खुश हूं मालिकिन.........! सारी उम्र आपको दुआ

देता रहूँगा।........भगवान् करे आपको कभी कोई कष्ट न हो.........।"

"तुम्हें पाया कैसे ?"

'बात यह है—मेरा ख़याल है, कि मालिकिन माँ से भी बढ़कर होती हैं, और हम लोगों को सदा उनकी भलाई सोचने में दत्त-चित्त रहना चाहिये। हमें हमेशा सच्चाई, ईमानदारी और प्रतिष्ठा के साथ......"

"यह तो बेकार की भूमिका बाँधने लगा सरकार !" दनियाशा ने कहा।

"मैं अपने भतीजे—रँगरूट–को लिवाकर शहर गया था। जब वापस लौट रहा था, तो सड़क के किनारे एक जगह इसे पड़ा पाया। जान पड़ता है, पोलिकी से गिर गया।"

"खैर, अब जाओ—जाओ, मैं तुम से खुश हूँ।"

"मैं तो इतना खुश हूँ सरकार कि........"

तब उसे याद आया, कि उसने ठीक तरह से मालिकिन को धन्यवाद नहीं दिया, और उसे शिष्टाचार जरा भी नहीं आता। मालिकिन और दनियाशा मुस्कुरा पड़ी। उधर कमरे से निकलते-ही दतला ताबड़-तोड़ भागा। उसे भय था, कभी कोई आकस्मिक घटना होजाय, और रुपया उससे वापस ले लिया जाय !

१४

★★★

बाहर आकर दतला ने इधर उधर देखा, और एक गली में घुस गया। वहाँ जाकर उसने अपनी पेटी ढीली की, और

नोटों का बटुवा उसमें खोंसकर, फिर कस ली। तब गली से बाहर आकर वह फिर चलने लगा। इस वक्त उसके दिमाग में ऐसे-ऐसे विचार चक्कर लगा रहे थे, कि जब चला तो शराबियों की तरह पैर लड़खड़ाने लगे। सहसा एक मनुष्य मूर्ति को उसने अपनी तरफ आते हुए देखा। इस मनुष्य-मूर्त्ति ने उसका नाम लेकर आवाज दी। दतला ने पहचाना—एफ़िम चौकीदार था, जो हाथ में डण्डा-लिये पहरा देता घूम रहा था।

"अरे बाबा! तुम कहाँ?" एफ़िम ने तपाक से कहा—"कहो रँगरूटों को शहर पहुँचा आये?"

"हाँ। तुम आज यहाँ कैसे घूम रहे हो?"

"मैं तो पोलिको का पहरा देने पर नियुक्त किया गया हूँ। उसने आज फाँसी लगाकर आत्म-घात कर लिया।"

"है कहाँ वह?"

"सामने! लोग कहते है, छत की कड़ी में रस्सी डालकर लटक गया।" एफ़िम ने अपने डण्डे से अँधरे में संकेत करते हुए जवाब दिया।

दतला ने उधर देखा, पर कुछ न देख सका। तो भी उसने आँखे भिपाईं, भौंहें चढ़ाई, और सिर हिलाया।

"बाबा, यह रात कितनी भयानक है!" एफ़िम ने कहा—"हड्डियाँ—तक काँपी जा रही हैं। यहाँ तो खैर खड़ा हूँ; हुक्म है—फर्ज है, पर चाहें ईगर मिखालोविच मुझे मार-हो डाले, अकेला ऊपर तो जाकर बैठूँ नहीं।"

"ओह! कैसा पाप! ·· महापाप··· !" दतला ने अपनी बात का मतलब आप ही समझे-बिना कह दिया। इसी तरह

वह और भी कुछ कहना चाहता था, कि सहसा ईगर मिखालोविच की आवाज सुनाई दी–

"ओ चौकीदार ! यहाँ आ !"

चौकीदार आगे बढ़ गया ।

ईगर ने पूछा "तुम्हारे पास वह दूसरा आदमी कौन खड़ा था ?"

"दतला ।"

"अरे ! तुम हो दतला ? यहाँ आओ ।"

दतला आगे बढ़ा । ईगर के हाथ में एक लाल्टेन थी; उसकी रोशनी में उसने पहचाना, ईगर के साथ लम्बा कोट और तुर्रेदार टोपी पहने एक पुलिस-काँन्स्टेबिल भी है ।

''देखो, इस बूढ़े को भी साथ ले चलो !" ईगर ने कहा ।

यह फरमान बूढ़े को कुछ अखरा, पर बचाव का तो कोई उपाय ही न था ।

''और तुम एफ़िम, तुम बड़े बहादुर निकले ! शाबाश ! झटपट दौड़ कर ऊपर और जाओ, आप—(काँन्स्टेबिल) के चढ़ने के लिये सीढ़ी छत से लगा दो ।"

एफ़िम, जो पहले जान देने पर भी, ऊपर नहीं जाना चाहता था, अब जूतों की चर्र-मर्र आवाज करता हुआ ऊपर चला ।

पुलीस वाले ने दियासलाई जलाकर सिगरेट सुलगाई । डेढ़ मील पर उसका डेरा था, और जिस वक्त वह शराब के नशे में मस्त पड़ा रहता था, ऐसे वक्त में इस अप्रिय काम के लिये बाध्य किये जाने के कारण उनका मन कुछ खिन्न था । रात के दस बजे वह यहाँ पहुंचा था, इसलिये लाश को

फौरन देखना चाहता था। चलते चलते ईगर ने दतला के वहाँ आने का कारण पूछा, तो दतला ने रुकते रुकते सब कुछ बता दिया,—रुपया पाने से लेकर मालिकिन की आज्ञा तक ! इतना उसने और जोड़ दिया कि वह सीधा ईगर मिखालोविच के पास ही आ रहा था !...पर उसके भय की सीमा न रही, जब ईगर ने देखने के लिये लिफाफा माँगा। पर देना ही पड़ा, कोई उपाय न था ! पहले ईगर ने और फिर कॉन्स्टेबिल ने बारी-बारी से लिफाफे का निरीक्षण किया, और दतला से दो-चार रूखे और संक्षिप्त प्रश्न किये।

"हाय ! रुपया हाथ से निकल गया !" दतला ने सोचा। पर जब कॉन्स्टेबिल ने लिफाफा सही सलामत लौटा दिया, तो जैसे उसकी जान में जान आई।

कॉन्स्टेबिल बोला—"सब तकदीर की बात है !"

ईगर ने कहा—"चलो अच्छा ही हुआ, इस वक्त इस रुपये का सदुपयोग भी हो सकता है। वह अभी-अभी अपने भतीजे की भर्ती कराकर आरहा है, अब कल जाकर उसकी एवजी का प्रबन्ध कर सकेगा !"

कांन्स्टेबिल ने ठण्डी साँस ली।

"भला कैसे खरीद सकता हूं ? रुपया ही कहाँ से बचेगा ? घर में तो पहले भूंजी-भाग तक नहीं है, घोड़ा अलग मरने को तैयार बैठा है।......और अब तो मैं समझता हूँ, कुछ हो भी नहीं सकता; देर काफ़ी हो चुकी है।"

"खैर, तुम्हारी मर्जी है !" ईगर ने कहा, और तब दोनों चुपचाप पुलिस-कर्मचारी के पीछे-पीछे चले।

चलते-चलते तीनों आदमी उस जगह पहुंचे, जहाँ

एफ़िम चौकीदार, हाथ में लाल्टेन लिए, सीढ़ी के पास खड़ा इनकी परीक्षा कर रहा था। काँन्स्टेबिल ने पूछा—"कहां है ?"

"इधर, ईगर ने धीरे-से कहा—"एफ़िम, तुम बड़े बहादुर हो ! शाबाश ! जरा लाल्टेन लेकर आगे-आगे चलो तो।"

एफ़िम का भय काफ़ूर हो चुका था। दो-दो सीढ़ियां छोड़कर पैर धरता हुआ वह बड़ी दिलेरी-से जीने पर चढ़ा। उसके बाद कांन्स्टेबिल और उसके पीछे ईगर चढ़े। जब वे लोग छत पर पहुंच घुके, तो दतला ने जीने की पहली सीढ़ी पर पैर रक्खा, और एक गहरी साँस लेकर विचार में पड़ गया। दो-तीन मिनट बीत गये। ऊपर से पैरों की आहट भी आनी बन्द हो गई, यानी वे लोग लाश के पास जा पहुंचे थे।

'बाबा, ऊपर आओ, दारोगा जी बुलाते हैं !" सहसा एफ़िम ने ऊपर से आवाज दी।

दतला ने ऊपर चढ़ना शुरू किया। ऊपर पहुंच कर देखा, सामने ही ईगर और काँन्स्टेबिल खड़े हैं, और उनके बीच में मानों एक आदमी और खड़ा था। यह पोलिकी था, पैर जमीन से छूगये थे, और गर्दन रस्सी के फन्दे में थी।

पुलिस-कर्मचारी ने कहा—"इसका रुख पलट दो !"

कोई न हिला।

"एफ़िम, तुम बड़े बहादुर हो ! शाबाश !······" ईगर ने कहना शुरु किया।

'बड़े बहादुर' ने आगे बढ़कर लाश का रुख फेर दिया, और उत्फुल्ल भाव से कभी मुर्दे को और कभी सामने खड़े

हुए साथियों को देखने लगा।

"बस, पहले-जैसा कर दो!" पुलिस वाले ने कहा।

एफ़िम ने इस आज्ञा का पालन भी उसी दिलेरी-से किया।

"अब इसे उठाकर नीचे ले जाना चाहिये।"

"तो आप की आज्ञा है न ?--रस्सी काट दें ?" ईगर ने कहा--"लाना भई, किसी के पास छुरा-वुरा हो तो देना जरा!"

'बड़े बहादुर' एफ़िम की मदद से लाश नीचे लाई गई। पुलिस-कर्मचारी ने अगले दिन डाक्टर के आने को सूचना देकर लाश कपड़े से ढंकवा दी, और सब ने प्रस्थान किया।

दतला सीधा घर पहुंचा। रास्ते में शराबियों की हा-हा, हू-हू सुनाई दी, तो भी वह विचलित न हुआ। जीवन में कभी उसने शराब न पी थी, अनायास ही इतना धन प्राप्त हो जाने पर भी उसका ध्यान उधर आकृष्ट न हुआ, और उसने घर में जाकर ही दम लिया। रात बहुत बीच चुकी थी। उसकी स्त्री सामने दालान में पड़ी खर्राटे लेरही थी, बड़ा लड़का और पोते बराबर की कोठरी में सो रहे थे, और छोटा लड़का बाहरी स्टोर रूम में अएटा-गाफिल पड़ा था। सिर्फ एलिजा की अभागिनी स्त्री जाग रही थी। सिर उसका नंगा था, मुंह निष्प्रभ और वस्त्र गन्दे और मैले। दतला घर में घुसा, तो वह खड़ी न हुई, बल्कि जोर जोर से रोने लगी।

बुढ़िया जागी, और स्वामी के लिये भोजन सामग्री ले आई। एलिजा की स्त्री एक बेंच पर पड़कर सुबकने लगी।

बुढ़िया ने भोजन सामग्री मेज पर रख दी, और स्वामी के निबट चुकने के बाद धीरे से हटा दी। बूढ़े ने चुपचाप भोजन समाप्त किया, एक अक्षर भी मुंह से न निकला। खाने के बाद उसने हाथ धोये, और बुढ़िया के साथ स्टोर रूम में चला गया। वहां दोनों फुस-फुस करके बहुत देर तक बातें करते रहे। फिर अन्त में कोने वाले भारी सन्दूक का ढकना खोलकर उसमें लिफाफा रख दिया।

जब स्टोर रूम से बाहर आया, तो मकान में अंधेरा छाया हुआ था। जिस जलती हुई लकड़ी से मशाल का काम लिया जारहा था, वह बुझ गई थी। एलिजा की बहू भी सोगई थी। बेंच पर बिना कुछ ओढ़े बिछाये, हाथ का तकिया बनाकर बेचारी नींद में गाफिल हो गई थी। दतला ने जूते उतार कर परे रक्खे; और धरती में एक तरफ टूटी सी चटाई बिछाकर पड़ रहा।

नींद उसे जल्दी न आ सकी। चाँद निकल आया था। मकान का अंधेरा हल्का पड़ने लगा। बेंच पर लेटो हुई एलिजा की बहू उसे दिखाई देती थी, उसके पास ही कोई और पदार्थ था, न जाने वह उसके लड़के का कोट था, या पानी का टप था, या कोई आदमी खड़ा था!--न जाने क्या था······? उसने आँखें फाड़ फाड़ कर अंधेरे में देखना शुरु किया।······क्या था? ओ हो! कहीं पोलिकी की प्रेतात्मा तो नहीं है, जिसका भय महल के लोगों की इतना सता रहा था, और जो शायद नोटों के लिफाफे के साथ-साथ उसके घर तक चली आई हो;...ओह! दतला का खून सर्द हो गया। जरूर वही है!···भय से उसकी आँखें

मिच गई । पर न तो उसे नींद ही आई, और न उठकर खड़े हो जाने की हिम्मत हुई । सहसा उसे अनुभव हुआ, कि खिड़की के सामने से कोई गुजर गया ! “कौन था ?” गांव का मुखिया तो नहीं था ? पर वह आधी-रात को भला क्यों आता ?” उसने सोचा--“अरे ! यह तो कोई घर में-ही घुस आया ! साफ़ पैरों की आवाज है !......दर्वाजा कैसे खोला ?......हैं ! बुढ़िया आगल लगाना भूल तो नहीं गई ?” इसी समय गली में कुत्ता भौंका । वैसे ही कोई मकान से अंधेरे में घूमने लगा, वैसे ही वर्तनों की खड़खड़ाहट सी सुन पड़ी, वैसे ही कोई रह रहकर दीवार में ठोके देने लगा ! बूढ़े को हड्डो-हड्डी काँप गई ! लो ! अबतो साफ आदमी की सूरत दिखाई देने लगी । दतला ने पहचान लिया--पोलिकी था ! उसने एक-दम उठने की इच्छा की, पर न उठ सका, अंग अंग शिथिल हो गया । उसने अनुभव किया, कि प्रेतात्मा मेज के पास पहुंची, और मेजपोश उतार कर जमीन पर फेंक दिया । फिर उस पर चढ़कर वह फर्श पर कूद पड़ी, और उसकी तरफ बढ़ने लगी । अब तो बिल्कुल साफ पोलिकी की सूरत थी ! प्रेतात्मा ने दतला की छाती पर हाथ रख दिया, और उसे झकझोरना शुरु किया ।

साथ ही प्रेतात्मा के होंठ हिले, और आवाज सुनाई दी—“रुपया मेरा है !”

“माफ़ करो ! बख़्श दो ! अब ऐसा नहीं करूंगा !” दतला ने कहने की कोशिश की, पर मुंह से बोल न निकल सका ।

दतला को ऐसा अनुभव हो रहा था, मानों छाती पर पर्वत रक्खा है। सहसा उसे याद आया, कि भगवान का नाम लेने से भूत भाग जाते हैं। उसने कोशिश की, पर नाम भी न ले सका। सहसा पास ही सोये हुए इसके एक पोते ने जोर की चीख मारी, और कांपना शुरु किया। दतला ने लुढ़ककर उसे दिवार के बीच में भींच दिया था! बच्चे की चीख ने दतला के ओंठ खोल दिये, और उसके मुंह से निकला—"हे भगवान्! बचाइयो……" छाती का बोझ हलका होता मालूम हुआ। दतला आगे बोला—"भगवान् के द्रोही नष्ट हो जायं…!" इतना कहा, कि पोलिकी की प्रेतात्मा उठ खड़ी हुई, और दर्वाजे की तरफ जाने लगी। दर्वाजे पर पहुंचकर उसने ऐसा प्रबल प्रहार किया, कि सारा घर हिलता जान पड़ा। दतला बराबर भगवान् का नाम लिये जा रहा था। पर आश्चर्य था कि बाबा-पोते के अतिरिक्त किसी ने कुछ अनुभव न किया। और सारा घर सोता रहा। बाबा पसीने-पसीने होकर कांपता हुआ भगवान् का नाम ले रहा था, और पोता दीवार और बाबा के शरीर के बीच में भिचकर चिल्ला रहा था। थोड़ी देर में फिर सब तरफ निस्तब्धता छा गई। बूढ़ा निश्चल हो गया। मुर्गे ने बाँग दी। मुर्गियों ने पर फटकारने शुरू किये। बिल्ली दतला की टाँगों पर से कूद कर बाहर आयी। दतला ने आँखें मलीं, और जाग उठा। उठकर उसने खिड़की खोली। सवेरा हो गया था। गली में अभी तक झुटपुटा था। गाड़ियाँ खिड़की के पास ही खड़ी हुईं थीं। दर्वाजा खोलकर दतला नंगेपाँव बाहर चला। घोड़ा चुप-

चाप खड़ा था। गाड़ी से निकालकर उसने घोड़े के आगे दाना डाला, और वापिस लौटा। बुढ़िया भी जाग गई थी, और आग जलाने का उपक्रम कर रही थी। दतला ने कहा —"सब को जगादो।" और एक कुल्हाड़ी लेकर वह फिर बाहर गया। जब फिर वापस लौटा, तो अच्छी तरह प्रकाश हो चुका था। सारा गांव जाग उठा था। औरतें दूध के मटके सम्हाले जा रही थीं, नवयुवक खेतों पर जाने की तैयारी कर रहे थे। इगनट घोड़े को साज पहना रहा था, और उससे छोटा पहियों को औंग रहा था। एलिजा की बहू ने रोना बन्द कर दिया था, और सबर के साथ उसने नहा धोकर साफ कपड़े पहने थे। अब वह चुपचाप बेंच पर बैठी, उस समय की बाट देख रही थी, जब गाड़ी पर बैठकर पति से अन्तिम भेंट करने के लिए शहर को रवाना होना था।

इस वक्त दतला के चहरे पर अजीब सख्ती दिखाई देती थी। आकर वह किसी से कुछ न बोला। सन्दूक से निकालकर सब से बढ़िया कोट डाटा, कमर में पेटी कसी, और पोलिकी वाले नोटों का लिफाफा ज्यों का त्यों जेब में छुपाकर ईगर मिखालोविच के पास चला।

"जरा जल्दी करो," चलते-चलते उसने अपने लड़के से कहा—"अभी मिन्ट भर में वापस आया!—तब तक तुम तैयार रहना।······जल्दी···!"

ईगर अभी अभी उठा था, और चाय पी रहा था। उसे भी शहर जाकर रंगरूटों का चार्ज फौजी अधिकारियों को देना था। दतला को देखकर पूछा—"कहो, कैसे आये?"

"ईगर भाई, मैं उस लड़के को छुड़ाना चाहता हूं। मुझ

पर इतनी कृपा करो। कल तुमने मुझसे कहा था--कि एवजी मिल सकता है। मैं रुपया खर्चने को तैयार हूं। कृपा करके मुझे बताओ, कैसे—क्या करना चाहिये; हम लोग तो कुछ जानते पूछते नहीं।'

"मगर तुमने अच्छी तरह सोच लिया है न ?"

"खूब अच्छी तरह। भाई ईगर, मुझसे उसकी जुदाई नहीं सही जाती। अच्छा, बुरा--जैसा भी था—आखिर भाई का लड़का था······। मुझे उसका बड़ा ख्याल है।··· असल में वह रुपया सुसरा बड़े-बड़े पाप करा डालता है; इसको तो अत्यन्त तुच्छ समझना चाहिये !···तो, अब मुझे बताओ, कैसे --क्या करना चाहिये······।"

कहते कहते उसने नोटों का लिफाफ़ा निकालने के लिए जेब में हाथ डाला।

ईगर मिखालोविच--जैसाकि इन मौकों पर उसकी आदत थी--बड़ी देर तक चुप खड़ा, ओठ चटखाता रहा। तब सोच विचार कर उसने दो चिट्ठियाँ दतला को दीं, और समझाया, कि शहर में जाकर क्या करना है, किससे मिलना है।

जब दतला घर लौटा, तो एलिजा की स्त्री इगनट के साथ रवाना हो चुकी थी। मोटो घोड़ी भी साज़ समान से दुरुस्त--तैयार खड़ी थी। दतला ने पेड़ से कमची तोड़ी, और दूसरी गाड़ी में सवार होकर अन्धा-धुन्धा घोड़ी को हाँक दिया। घोड़ी इतनी तेजी से दौड़ी, कि उसका पेट कमर से जा लगा, और दतला ने आँख उठाकर उस तरफ देखा तक नहीं। उसे तो केवल एक ही खयाल था, कि कहीं शहर पहुंचने में देर न

होजाय, कभी एलिजा फौज पर न चला जाय, और कहीं भूत का धन उसके पास न रह जाय !

दतला की मानसिक अवस्था का पूरा-पूरा चित्रण मैं नहीं करूँगा। मैं सिर्फ यही कहूंगा, कि उसका भाग्य उसके साथ था। उस आदमी के पास, जिनके नाम ईगर ने चिट्ठी दी थी, एक एवजी तैयार था। उस एवजी के सिर पर कुछ कर्ज़ था, उम्र तेईस बरस की थी, और वह फ़ौज में जाने के बिल्कुल उपयुक्त था। उसका मालिक चारसौ रूबल माँगता था, और दतला ने तीन सौ लगाये। जब तीन सौ पर सौदा न पटा, तो दतला बोला—"अच्छा बोलो, तीन सौ पच्चीस लेते हो !" पर बेचने वाला भाप गया, कि अभी और गुन्जायश है, इस लिये चारसौ ही पर अड़ा रहा। दतला ने उसका हाथ पकड़ और कहा—"तीन सौ पच्चीस नहीं लेने के ?...नहीं लेने के ? .अच्छा बोलो, साढ़े तीन सौ में राज़ी हो ?...अगर नहीं, तो तुम जानो, तुम्हारा काम जाने ?"

कहकर दतला ने चल पड़ने का प्रदर्शन किया।

बेचने वाले ने बोलने का उपक्रम किया। दतला रुका, और बोला—"हाँ तो—ज्यादे शानपती में आ रहे हैं ! लो, झट-पट रसीद तैयार करदो। ये लो, बीस रूबल के नोट बयाना जमा करो।

बेचने वाला अब भी तैयार न हुआ, और बयाना उसने न लिया। अब भी वह अपने चारसौ रूबल की रट लगाये जा रहा था।

"याद रक्खो, तुम्हारा यह आचरण पाप में शुमार किया

जायगा," दतला बोला। फिर ज्यादे सख्त और प्रभाव पूर्ण स्वर में कहने लगा—"एक दिन सबको मरना है।......याद रक्खो !"

इस डाँट ने बेचने वाले को पिघला दिया, और वह बोल उठा—"अच्छी बात है, तुम भी क्या कहोगे......!"

बस, सौदा तय हो गया। एवजी के नौजवान को जगाया गया। तब दोनों उसके साथ प्रबन्ध विभाग के दफ्तर की तरफ चले। जिसको भर्ती कराने ले जा रहे थे, वह खुश था। रास्ते में उसने गला तर करने के लिये थोड़ी शराब माँगी। दतला ने कुल दाम उसे दिये। जब भर्ती के दफ्तर में पहुंचे, तो उसकी हिम्मत ने जवाब देना शुरू कर दिया। पर दतला और उसके मालिक ने समझा बुझाकर उसे पक्का पोढ़ा किया, और मिन्नत समाजत के बाद तीन बजे क्लर्क ने उन्हें बुलाया। कुछ देर परीक्षण और प्रश्नोत्तर में लगी, और तब उसके असली कपड़े उतारकर रँगरूटों की पोशाक पहनाई गई, बाल काटे गये और दूसरे दर्वाज़े से उसे बाहर भेज दिया गया। तब दतला ने रुपया चुकता करके रसीद ली, और उधर चला, जिधर एलिजा था। एलिजा और उसकी पत्नी रसोई-घर के कोने में बैठे थे। दतला वहाँ पहुँचा, तो दोनों चुप हो गये, और विषण्ण नेत्रों से उसकी तरफ ताकने लगे। अभ्यासानुसार दतला ने एक प्रार्थना का पद पढ़ा, फिर पेटी खोली, और एक कागज़ हाथ में लेकर बाहर कम्पाउण्ड से इगनट और एलिजा की मां को बुला लिया।

"एलिजा तुम बड़े बे-इन्साफ लड़के हो," तब उसने

आगे बढ़कर कहा—"कल रात को तुमने मेरे साथ बड़ा भद्दा व्यवहार किया ।......क्या मुझे तुम्हारा ख़याल नहीं था ? मुझे वह वक्त याद है, जब मेरा भाई तुम्हें जरा-से को सौंपकर मरा था । समझे ? अगर मेरे वश में होता तो क्या मैं तुम्हें अपने कलेजे से अलहदा होने देता ? अब भगवान् ने दया की है, और मैं दौड़ा-दौड़ा आया ! ......यह लो, यह देखो, कागज......" कहते-कहते उसने कागज एलिजा के सामने रख दिया ।

बाहर से और भी बहुत से लोग कौतूहलवश आ गये थे । सभी ने असलियत का अनुमान कर लिया, पर बूढ़े के प्रेम-पूर्ण वक्तव्य के बीच में बोलने को किसी की इच्छा न हुई ।

"यह देखो, यह कागज है । इसके लिये मैंने पूरे चार सौ रूबल खर्च किये हैं । अब कभी अपने चचा पर लाञ्छन न लगाना ।"

एलिजा उठा, पर निश्चय न कर सका, कि क्या कहे; इसलिये चुप हो गया । आवेग के कारण उसके ओठ हिलकर रह गये । उसकी बूढी मां आगे आई, और रोते-रोते अपने लाल के गले लिपटने को उद्यत हुई, पर बूढ़े दतला ने अधिकार-पूर्ण ढंग से उसे पीछे हटा दिया, और कहना शुरू किया—

"तुमने रात को मेरे विषय में एक बात कही थी । तुम्हारी उस बात ने खञ्जर बनकर मेरा दिल छेद डाला । तुम्हारे बाप ने मरते-मरते तुम्हें मुझको सौंप दिया था, और मैंने तुम्हें सदा अपने लड़कों से ज्यादा समझकर रक्खा;

अगर किसी तरह मैंने तुम्हारे साथ दुर्व्यवहार भी किया था, तो......बात यह है कि यह जमाना ही बुरा है ! क्यों भाई लोगों, मेरी बात गलत तो नहीं है ?"—कहकर वह आस-पास इकट्ठे हुए आदमियों की तरफ घूमा। फिर बोला—"यह तुम्हारी बहू रही, और यह तुम्हारी मां......और यह रहा, तुम्हारे छुटकारे का परवाना। रुपया पैसा तो सुसरा हाथ का मैल है, मुझे उसका गम नहीं, पर मेरी तो यही विनय है, कि परमात्मा के लिये मेरी तरफ से अपने भाव शुद्ध करलो।"

उसने कोट के पल्ले उठाये, और एलिज़ा और उसकी बहू के आगे घुटने टेककर बैठ गया। उन दोनों ने उसे उठाने की कोशिश की, पर तब तक न उठा, जब तक कि उसका माथा जमीन से न छू गया। तब कोट के पल्ले झाड़कर एक बेंच पर बैठ गया। एलिजा की मां और बहू के मुहँ से खुशी की चीखें निकल पड़ीं, और सब तरफ धन्य ! धन्य ! सुन पड़ने लगा। "यह आदमी का काम नहीं, देवताओं का है !" एक ने कहा। "रुपया क्या चीज है ? आदमी के आगे रुपये की औक़ात भी क्या है ?" दूसरा बोला। "कैसी खुशी की बात है ! इस विषय में तनिक संदेह नहीं, कि आदमी नहीं, देवता है।" तीसरा कह उठा। सिर्फ इन लोगों ने, जो भर्ती होकर जा रहे थे, कुछ न कहा, और चुपचाप बाहर चले गये।

दो घंटे बाद दतला की दोनों गाड़ियां शहर-पनाह के बाहर चली जा रही थीं। पहली में—जिसमें पसीने से शराबोर मोटी घोड़ी जुती हुई थी—खुद दतला, और इगनट

बैठे हुए थे। दूसरी में, जिसकी घोड़ी की तरफ किसी का ध्यान न था, एलिजा की बहू और उसकी मां, दुशाला ओढ़े बैठी थीं। एलिजा खुशी से लाल चेहरा बनाए, घोड़ी की तरफ पीठ किए कोच-बक्स पर बैठा था, और खुश होकर मां और बहू से बातें बनाता जाता था। लोगों की बात-चीत की आवाजें, गाड़ी के पहियों की चर्र-चूं. और जानवरों की अजीब ध्वनि-सबने मिलकर अजीब समां बाँध रक्खा था। घोड़ियाँ पूंछ उठाये घर की तरफ लपकी चली जा रहीं थीं। जो कोई राहगीर मिलता, तो उस सुखी परिवार को देखने के लिये हठात् ठहर जाता।

सब लोग जल्दी ही खुले खेतों में आ पहुंचे। अब न सिपाहियों का भय था, न प्यादों की उपट थी; न भर्लों की चिन्ता थी। चार मील तेजी से चलते रहने पर इगनेट बाप को सीता छोड़कर एलिजा की गाड़ी के पास आ पहुंचा।

शहर से एक शराब की बोतल खरीद ली गई थी। अब वह खोली गई और सबने मिलकर उसे खाली किया। थोड़ी देर के बाद एलिजा ने एक तान शुरू कर दी। इगनेट भी उमंग में आकर साथ-साथ अलापने लगा। अब तो वह समाँ बंधा, कि घोड़े गाड़ी का होश न रहा। सामने से एक गाड़ी चली आ रही थी। गाड़ीवाले ने चिल्लाकर कहा—"बाँये रहो-बांये।" पर यहाँ किसे सुनने का होश था? नतीजा यह हुआ, कि गाड़ी लड़ती-लड़ती बचीं, और गाड़ीवाला लाल-लाल आंखों से इस सुखी परिवार की तरप ताक़ता हुआ किसी तरह बच कर आगे निकल गया।

तिस पर भी इनके गाने में कोई विघ्न न पड़ा।

—★—